RNI No.: MPBIL/2001/5256
DAVP Code : 128101
Postal Registration No. : भोपाल/म.प्र./581/2021-2023
Publish Date : Every Month Dt. 05
Posting Date : Every Month Dt. 15
Rs. 10/-

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

वर्ष 23 अंक 11 05 जुलाई 2023

जगत विज़न

मप्र विधानसभा चुनाव-2023

कमल VS कमलनाथ

दांव पर साख

प्रेरणा स्त्रोत : स्व. श्री जगत पाठक

संपादक	विजया पाठक
कार्यकारी संपादक	समता पाठक
दिल्ली संवाददाता	नीरज दिवाकर
मध्यप्रदेश संवाददाता	अर्चना शर्मा
छत्तीसगढ़ संवाददाता	मणिशंकर पाण्डेय
पश्चिम बंगाल ब्यूरो चीफ	अमित राय
बुंदेलखण्ड संवाददाता	रफत खान

सम्पादकीय एवं विज्ञापन कार्यालय

भोपाल

एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल

मो. 98260-64596, मो. 9893014600

फोन : 0755-4299165 म.प्र. स्वत्वाधिकारी,

छत्तीसगढ़

4-विनायका विहार, रिंग रोड, रायपुर

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक,

विजया पाठक द्वारा समता ग्राफिक्स एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल म.प्र. द्वारा कम्पोज एवं जगत प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्लाट नं. 28 सुरभि विहार बीडीए रोड भेल भोपाल से मुद्रित एवं एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल म.प्र. से प्रकाशित संपादक विजया पाठक। समस्त विवादों का कार्यक्षेत्र भोपाल सत्र-न्यायालय रहेगा। पत्रिका में प्रकाशित किये जाने वाले संपूर्ण आलेख एवं सामग्री की जिम्मेदारी लेखक एवं संपादक की होगी।

E-mail : jagat.vision@gmail.com

Website: www.jagatvision.co.in

मासिक द्विभाषी पत्रिका वर्ष 23 अंक 11 05 जुलाई 2023

- वोट के लिए मतदाता को उपहार भेंट करने की होड़ 27
- केन्द्र की सियासत में उत्तरप्रदेश में मजबूत होना जरूरी 32
- क्या अशोक गहलोत और सचिन पायलट के बीच 35
- कितनी सफल होगी नीतीश कुमार की विपक्षी एकता मुहिम? ..38
- भारत में स्वयं मिल सकता है गुलाम कश्मीर 44
- गांधी दुनिया से कभी खत्म नहीं हो पाएंगे 48
- डेढ़ दशक में जन-सहयोग से विकसित राज्य के रूप में उभरा मध्यप्रदेश 50
- सरकार के तीन साल कृषि क्षेत्र में बेमिसाल 53
- मणिपुर हिंसा का जिम्मेदार कौन? 58
- Public Relations in Banking Sector 62

अब तुम्हीं हमारी नैया पार लगाओ महाराज !
विजया :)

संपादकीय

परिवारवाद से जूझती देश की क्षेत्रीय पार्टियां

राजनीति में कहा जाता है कि कोई किसी का सगा नहीं होता है। वह चाहे परिवार हो या अन्य कोई। कुछ ऐसा ही देखने को इस समय देश की राजनीति में देखने को मिल रहा है। खासकर देश की क्षेत्रीय पार्टियों में तो यह आम बात हो गई है। उप्र, बिहार, महाराष्ट्र, तेलंगाना जैसे तमाम राज्य हैं जहां की क्षेत्रीय पार्टियां परिवारवाद से जूझती नजर आ रही हैं। यहां की पार्टियों पर आरोप लगते आ रहे हैं कि यह परिवारवाद का बढ़ावा देती हैं। गौरतलब है कि महाराष्ट्र की राजनीति पर इन दिनों देश की नजर है। महाराष्ट्र में 25 साल पुरानी पार्टी कुछ ही घंटों में ताश के पत्ते की तरह बिखर गई। एनसीपी पर चाचा-भतीजा दोनों ने दावा ठोक दिया। मराठा क्षत्रप शरद पवार और उनके भतीजे अजित पवार के बीच जारी लड़ाई देश की सर्वोच्च अदालत तक पहुंच चुकी है। अजीत पवार ने नेशनलिस्ट कांग्रेस पार्टी पर अपना दावा ठोका है। सियासी दिग्गजों के बीच संबंधों में दगाबाजी का कोई ये पहला मामला नहीं है। इससे पहले भी राजनीतिक परिवार में पावर के लिए लड़ाई, सेंधमारी और दगाबाजी देखने को मिली है। वह चाहे, रामविलास पासवान की राजनीति विरासत को आगे बढ़ाने की बात हो या फिर मुलायम सिंह की राजनीति को आगे लेकर चलने की चर्चा और अब एनसीपी में शरद पवार और अजित पवार के बीच जारी जंग हो। हालांकि, महाराष्ट्र का मामला अब चुनाव आयोग के पास है। चुनाव आयोग इस मामले की पड़ताल करने में जुटा है। आयोग के फैसले के बाद ही तय हो पाएगा कि एनसीपी का असली हकदार कौन है। अजित पवार या शरद पवार। इससे पहले उत्तर प्रदेश में चाचा शिवपाल यादव और भतीजा अखिलेश यादव के बीच राजनीतिक फसाद किसी से छिपी नहीं है। समाजवादी पार्टी के संस्थापक दिवंगत मुलायम सिंह यादव की सियासी विरासत को आगे बढ़ाने के लिए अखिलेश यादव और चाचा शिवपाल यादव के बीच सियासी तकरार लंबे समय तक चलती रही। दरअसल, मुलायम सिंह यादव की जब सेहत गिरने लगी तो उन्होंने 2012 में अपने बेटे अखिलेश यादव को पार्टी की कमान सौंप दी थी, लेकिन जबतक मुलायम सिंह राजनीति में सक्रिय रहे तब तक सरकार से लेकर संगठन तक का पूरा काम शिवपाल यादव के हाथों में था। शिवपाल यादव खुद को मुलायम का उत्तराधिकारी समझते थे, लेकिन मुलायम ने अपनी सियासी विरासत भाई को देने के बजाय बेटे अखिलेश यादव को सौंप दी। लोजपा के संस्थापक राम विलास पासवान के निधन के बाद पशुपति पारस ने अपने भाई की सियासी विरासत पर रातोंरात कब्जा जमा लिया। 2021 में लोक जनशक्तिपार्टी पर अधिकार की लड़ाई खुलकर सामने आई। रामविलास पासवान के निधन के बाद भाई पशुपति पारस ने रातोंरात लोजपा के छह में से पांच सांसदों को अपने गुट में शामिल कर पार्टी पर दावा ठोक दिया। फिर रामविलास पासवान के बेटे चिराग पासवान ने चाचा के खिलाफ मोर्चा खोलते हुए पार्टी पर अपना अधिकार जमाने की कोशिश की, लेकिन तब तक गंगा से पानी काफी बह चुका था। पशुपति पारस एनडीए में शामिल हो गए और मौजूदा समय में वो मोदी सरकार में मंत्री हैं। देश की राजनीति में परिवार का विवाद और पार्टियों में तोड़फोड़ की कोशिश लंबे समय से चली आ रही है। राजनीतिक परिवार में पावर के लिए लड़ाई, सेंधमारी और दगाबाजी देखने को मिली है। भारतीय राजनीति में परिवार की विरासत की अहम भूमिका रही है। आजादी के बाद से ही पारिवारिक विरासत का सियासत में वर्चस्व रहा है, लेकिन पारिवारिक राजनीति की वजह से समय-समय पर तकरार भी देखने को मिली है। वह चाहे बिहार हो, उत्तर प्रदेश या फिर महाराष्ट्र हो। इन राज्यों में पारिवारिक विरासत में सेंध लगाने की भरपूर कोशिश भी की गई है। कुछ नेता तो इसमें सफल भी हुए हैं। परिवारवाद से जूझती इन पार्टियों का भविष्य अब चाहे कुछ भी हो लेकिन इतना तय माना जाने लगा है कि जिस पार्टी के संस्थापक हैं उन्हीं के वारिस पार्टी का मुखिया होता है।

विजया पाठक

कमल VS कमलनाथ

दांव पर साख

“ प्रदेश में 07 दिसंबर 2023 को विधानसभा का कार्यकाल खत्म हो जाएगा। राज्य में जहां एक तरफ बीजेपी पूरे जोर-शोर के साथ कार्यक्रमों और योजनाओं का ऐलान कर रही है। प्रदेश में मिली हुई सत्ता जाने के बाद इस बार कांग्रेस की पूरी कोशिश है कि पूर्ण बहुमत के साथ सरकार बनाए। मौजूदा शिवराज सरकार कर्ज पर कर्ज लेकर चुनाव में जीत के लिए वृहद स्तर पर आयोजनों का झड़ी लगा रही है। सभी वर्गों को साधने में कर्ज लेकर पैसा पानी की तरह बहा रही है। माना जा रहा है कि बीजेपी इस बार पीएम मोदी के चेहरे पर विधानसभा का चुनाव लड़ने वाली है। जैसा कि बीजेपी अन्य राज्यों में करती आ रही है। प्रदेश में लंबे समय से बीजेपी की सरकार है जिस कारण से पार्टी को एंटी इनकंबेंसी का डर भी सता रहा है। यह भी तय माना जा रहा है कि इस बार विधानसभा के चुनाव कशमकश भरे होने वाले हैं। बाजी किसके हाथ लगेगी इसका पूवार्नुमान किसी को नहीं है। लिहाजा सत्ताधारी दल बीजेपी किसी तरह की चूक करने को तैयार नहीं है। यही कारण है कि उसने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के चेहरे को सामने रखकर चुनाव लड़ने का लगभग मन बना लिया है। राज्य में बीजेपी की लगभग दो दशक से सरकार है। बीच में लगभग सवा साल ऐसा आया था जब कांग्रेस के हाथ में सत्ता थी। लंबे अरसे से सत्ता की बांगडोर बीजेपी के हाथ में होने के कारण पार्टी को एंटी इनकंबेंसी की चिंता सता रही है। पिछले कुछ दिनों में पार्टी के अंदरूनी सर्वे में भी पार्टी को खुश करने वाले नहीं रहे। उसके बाद से पार्टी ऐसी रणनीति पर काम कर रही है जिससे एक तरफएंटी इनकंबेंसी के प्रभाव को रोका जा सके तो वहीं प्रधानमंत्री की छवि को आगे रख कर जनता को लुभाया जा सके। बीजेपी के राष्ट्रीय संगठन का प्रदेश में लगातार दखल बढ़ रहा है और यही कारण है कि वरिष्ठ नेताओं की राज्य में सक्रियता भी बड़ी है। पार्टी का मकसद जमीनी स्थिति का आंकलन करना और उसमें सुधार लाना है। इसके अलावा पार्टी के प्रमुख नेताओं के साथ ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, गृहमंत्री अमित शाह, पार्टी अध्यक्ष जेपी नड्डा के दौरे भी राज्य में बढ़ रहे हैं। प्रधानमंत्री मोदी की छवि को पार्टी आगे रखकर राज्य के विधानसभा चुनाव में मैदान में उतरने का मन बना चुकी है। इसी के चलते पीएम मोदी के राज्य में प्रवास भी बढ़ रहे हैं। ”

विजया पाठक

मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव को लेकर सरगर्मियां तेज हो गई हैं। प्रदेश की दोनों प्रमुख पार्टियां कांग्रेस और बीजेपी ने अपने-अपने स्तर पर तैयारियां भी प्रारंभ कर दी हैं। साथ ही दोनों पार्टियों ने चुनावी घोषणाओं का पिटारा खोल दिया है। बीजेपी जहां महिलाओं, किसानों और युवाओं को लेकर लंबी-लंबी घोषणाएं कर रही है और इन वर्गों को साधने की पूरी कोशिश कर रही है वहीं कांग्रेस सत्ता में आने के बाद की सभी वर्गों को लेकर वादे कर रही है। 2018 जैसे

लंबे अरसे से सत्ता की बांगडोर बीजेपी के हाथ में होने के कारण पार्टी को एंटी इनकंबेंसी की चिंता सता रही है। पिछले कुछ दिनों में पार्टी के अंदरूनी सर्वे में भी पार्टी को खुश करने वाले नहीं रहे।

हैं। एक तरफ जहां बीजेपी अपने अंदरूनी सर्वे के आधार पर विधायकों के टिकट तय करने की रणनीति पर कार्य कर रही है वहीं कांग्रेस भी अब ऐसे प्रत्याशियों की खोज में लगी है जो अपने-अपने क्षेत्रों में बेहतर छबि रखते हों। दोनों प्रमुख पार्टियां 2023 के विधानसभा चुनाव में फूंक-फूंक कर कदम रखने वाली हैं क्योंकि हालात बता रहे हैं कि इस बार टक्कर 2018 जैसी ही होने वाली है। टांके की इस टक्कर में जिस भी पार्टी ने

काफी कम वक्त बचा है। यही कारण है कि दोनों प्रमुख राजनीतिक दल भारतीय जनता पार्टी और कांग्रेस पूरी तरह चुनावी मोड़ में आ गए हैं। दोनों ही दल एक-दूसरे पर हमलावर हैं। 2018 का विधानसभा चुनाव ऐसा चुनाव था जिसमें कांग्रेस को डेढ़ दशक बाद न केवल बढ़त मिली थी बल्कि सत्ता भी हासिल हुई थी, वहीं भाजपा डेढ़ दशक तक सत्ता में रहने के बाद बहुत कम अंतर से कांग्रेस से पीछे रह गई थी। पिछली बार

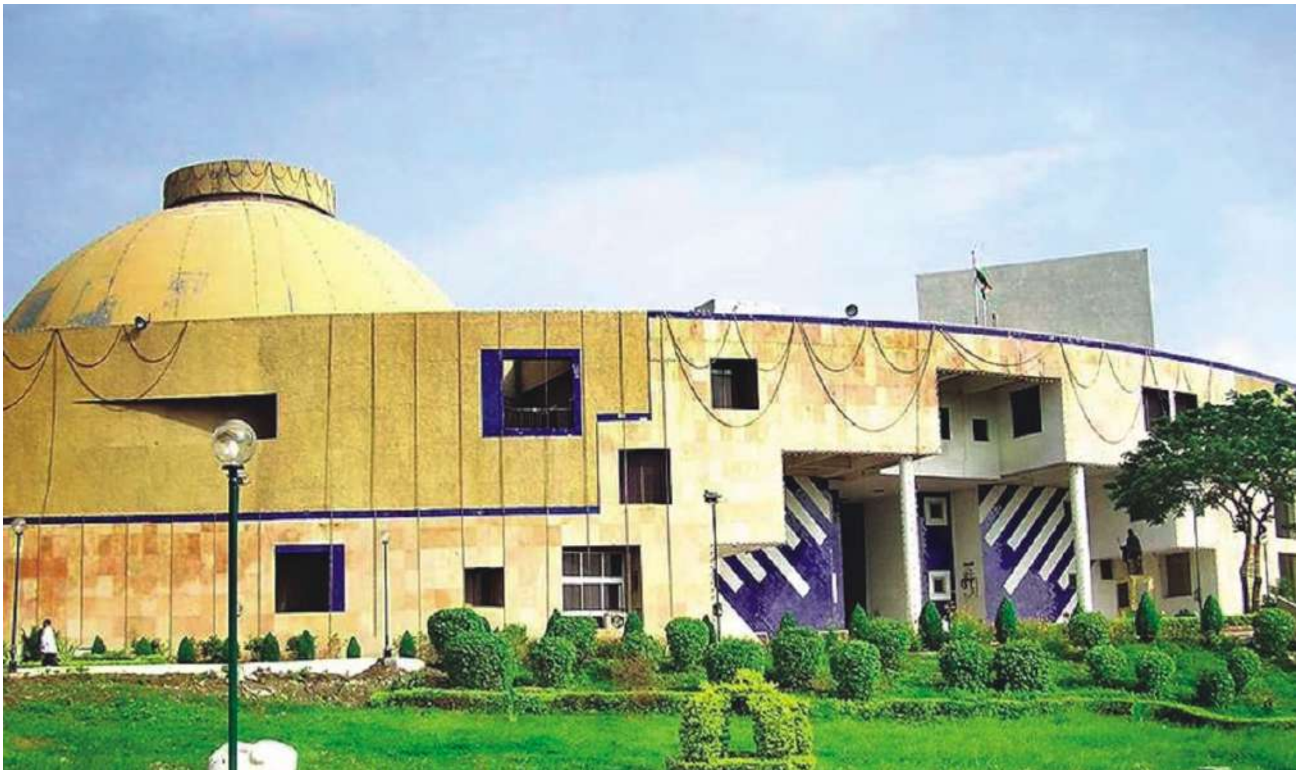

कशमशक चुनाव परिणाम के मददेनजर दोनों पार्टियां अब किसी भी तरह की कोर कसर नहीं छोड़ रही हैं। बताया जा रहा है कि मध्यप्रदेश में विधानसभा चुनाव को लेकर बीजेपी ने अपनी रणनीति तय कर ली है। प्रदेश की दोनों प्रमुख पार्टियां कांग्रेस और बीजेपी अपनी-अपनी तैयारियों में जुट गई हैं। संगठन स्तर पर कसावट शुरूहो गई है। तमाम विधानसभा क्षेत्रों में जिताउ उम्मीदवारों की खोज परख भी प्रारंभ हो गई

उम्मीदवारों के चयन में गलती नहीं की वह पार्टी सत्ता पर काबिज हो जायेगी। सत्ताउ और विपक्ष दोनों ही चुनाव को हल्के में नहीं ले रहे हैं। सत्तासीन बीजेपी सरकार को एंटी एंकम्बेंसी का डर सता रहा है और पिछली कमलनाथ सरकार के कामों से लोगों के मन में जो पिछली सरकार की छबि बनी है उससे डरी हुई है। कमलनाथ भी अपने 18 माह के कार्यों को लेकर चुनावी मैदान पर उतरे हैं। मध्यप्रदेश में विधानसभा चुनाव में

प्रधानमंत्री मोदी की छवि को बीजेपी आगे रखकर राज्य के विधानसभा चुनाव में मैदान में उतरने का मन बना चुकी है। इसी के चलते पीएम मोदी के राज्य में प्रवास भी बढ़ रहे हैं।

मुश्किल में दिख रही बीजेपी, केन्द्रीय नेतृत्व के भरोसे

चर्चा जोरों पर है कि विधानसभा चुनाव से पहले भाजपा मध्यप्रदेश में मुख्यमंत्री के लिए एक नया चेहरा चुन सकती है, जैसा कि उसने गुजरात में कर चुनाव जीता। सीएम शिवराज चौहान को बदलने से पार्टी को संभावित सत्ता विरोधी लहर पर काबू पाने में मदद मिल सकती है। 30 फीसदी सीटों पर भाजपा का कोई मुकाबला नहीं है जबकि 30 फीसदी विधानसभा सीटों पर कांग्रेस मजबूत दिख रही है। बाकी 49 फीसदी सीटों पर कांटे की टक्कर दिख सकती है। ऐसे में भाजपा के लिए मध्य प्रदेश में कमल खिलाना पहले जैसा आसान नहीं है। भाजपा के सामने बड़ा एंटी इनकंबेंसी फेक्टर है। बताया जाता है कि भाजपा के अंदरखाने यह चर्चा चल रही है कि राज्य में पार्टी का नया चेहरा कौन होगा ? बताया जा रहा है कि विधानसभा चुनाव से पहले या बाद में भाजपा मुख्यमंत्री का अपना फेस बदल सकती है। मध्यप्रदेश में पार्टी के सर्वे से पता चला है कि सीटें 80 से कम ही रहेंगी और इतने में सरकार नहीं बन सकती। मध्यप्रदेश में 2003 से लगातार भाजपा की सरकार है। बीच में 2018 में 15 महीने के लिए कांग्रेस को सत्ता मिली थी और कमलनाथ मुख्यमंत्री बने लेकिन जल्द ही 'सियासी खेल' हो गया। करीब 17 साल से शिवराज सिंह चौहान मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री हैं। शिवराज सिंह चौहान 23 मार्च 2020 को चौथी बार राज्य के मुख्यमंत्री बने थे। 30 नवंबर 2005 से 17 दिसंबर 2018 तक लगातार 13 साल 17 दिन तक वे मुख्यमंत्री रहे। फिर करीब डेढ़ साल कांग्रेस की सरकार रही और कमलनाथ मुख्यमंत्री बने। 23 मार्च 2020 से एक बार फिर मुख्यमंत्री की कुर्सी शिवराज के पास आ गई। उन्हें मुख्यमंत्री रहते हुए करीब 16 साल हो चुके हैं।

कमलनाथ ने जो धोखा खाया है उससे सबक लेते हुए ही वह इस बार कोई गलती भी नहीं करने वाले हैं जिससे कांग्रेस को कोई नुकसान न हो पाये। बताया जा रहा है कि कांग्रेस इस बार बहुमत के आंकड़े 116 से आगे 150 का टारगेट लेकर चल रही है। चुनाव में अब केवल 05 महीने ही बचे हैं। पीएम मोदी का आदिवासी गौरव दिवस पर मध्यप्रदेश प्रवास हुआ, इसी वर्ग से जुड़ी

पिछले चुनाव में राज्य की 230 विधानसभा सीटों में से कांग्रेस को 114 और भाजपा को 109 सीटें हासिल हुई थी। वहीं कांग्रेस की बात की जाये तो वह कर्नाटक चुनाव में मिली जीत से उत्साहित है।

रानी कमलापति के नाम पर भोपाल में रेलवे स्टेशन का नाम रखा गया। राज्य में भाजपा की नजर आदिवासी वोट बैंक पर है। वर्ष 2018 के विधानसभा चुनाव में भाजपा को आदिवासी इलाके में बड़ा नुकसान हुआ था। 47 सीटों में से भाजपा सिर्फ 16 सीटें जीत सकी थी और कांग्रेस 30 सीटों पर आगे रही थी। कुल मिलाकर भाजपा को सत्ता से दूर रखने में आदिवासी वोट की अहम भूमिका रही थी। भाजपा एक बार फिर इस वोट बैंक में अपनी पकड़ को और मजबूत करना चाह रही है। पिछले चुनाव में राज्य की 230 विधानसभा सीटों में से कांग्रेस को 114 और भाजपा को 109 सीटें हासिल हुई थी। वहीं कांग्रेस की बात की जाये तो वह कर्नाटक चुनाव में मिली जीत से उत्साहित है। उसे लगने लगा है कि मध्यप्रदेश में कांग्रेस वापिसी कर सकती है। इसके अलावा कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष राहुल गांधी द्वारा की गई भारत जोड़ो यात्रा से मिले भारी जनसमर्थन से कांग्रेस का ग्राफ बड़ा है। पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ प्रदेश में कांग्रेस की सरकार बनाने के लिए दिन-रात मेहनत कर रहे हैं। प्रदेश भर का दौरा कर कांग्रेस के प्रति माहौल बना रहे हैं और लोगों के बीच पहुंच कर वर्तमान सरकार की नाकामियों को उजागर रह रहे हैं। इसके अलावा प्रदेश में रही कांग्रेस की 18 महीनों की सरकार की उपलब्धियों को गिना रहे हैं। कांग्रेस चुनाव में वापसी करने की तैयारी कर रही है। वहीं, पार्टी इस महासंग्राम से पहले अपने समर्थकों को एक साथ रखने के लिए हर संभव प्रयास कर रही है। पार्टी गारंटी पर भी ध्यान केंद्रित कर रही है, जो लोगों से जुड़ने के लिए हिमाचल प्रदेश और कर्नाटक में उसके लिए एक वरदान साबित हुआ। कांग्रेस ने 12 जून 2023 को राज्य में अपने चुनाव अभियान की शुरु आत की, जब पार्टी महासचिव प्रियंका गांधी वाड्रा ने जबलपुर में एक जनसभा को संबोधित किया। राज्य के लोगों

मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान 2023 में सत्ता में आने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं। सभी वर्ग को साधने के लिए नई-नई घोषणाओं से लुभा रहें हैं। चुनावी साल में वे पूरी एक्टिव मोड में हैं।

को संबोधित करते हुए, प्रियंका गांधी ने हिमाचल प्रदेश और कर्नाटक की तर्ज पर पांच वादों की घोषणा की, जहां कांग्रेस ने विधानसभा चुनाव में जीत हासिल की। पार्टी की गारंटियों ने हिमाचल प्रदेश और कर्नाटक राज्यों में काम किया था, जहां वह हाल ही में जीती थी। पार्टी ने सत्ता में आने के बाद वादों को पूरा करना भी सुनिश्चित किया था, इस प्रकार मतदाताओं को स्पष्ट संदेश है कि ये केवल वादे नहीं हैं, बल्कि इन्हें धरातल पर उतारा भी जा रहा है। आपको बता दें कि पार्टी ने राजस्थान और छत्तीसगढ़ में भी चुनाव के दौरान लोगों से किए गए वादों को पूरा किया।

कमलनाथ और दिग्विजय सिंह ने संभाली कमान- पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ जो पार्टी के राज्य इकाई प्रमुख भी हैं, जिलों पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं, पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह विधानसभा स्तर पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं और वहां कार्यकर्ताओं को लामबंद कर रहे हैं। दोनों नेताओं के बीच की समझ से कांग्रेस को बीजेपी के गढ़ वाले इलाकों सहित ग्रामीण इलाकों में जमीन हासिल करने में मदद मिल रही है। बीजेपी के विभाजित घर और वहां उभर रहे कई गुट भी राज्य में सबसे पुरानी पार्टी को विधानसभा चुनाव से पहले जमीन हासिल करने में मदद कर रहे हैं। गौरतलब है कि ज्योतिरादित्य सिंधिया ने कांग्रेस में एक विद्रोह का नेतृत्व किया था, उन्होंने अपने 22 वफादार विधायकों के साथ पार्टी छोड़ दी और बीजेपी में शामिल हो गए थे। इस प्रकार राज्य में 15 महीने पुरानी कमलनाथ के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार गिर गई थी। कांग्रेस ने अपनी पिछली गलतियों से सीखा है। इसलिए इस बार पार्टी नेतृत्व यह सुनिश्चित कर रहा है कि इस साल के अंत में होने वाले महासंग्राम से पहले कोई पार्टी छोड़कर न जाए। इस बीच कांग्रेस ने अभी से उम्मीदवार चयन पर काम करना शुरू कर दिया है। मौजूदा विधायकों के प्रदर्शन के साथ-साथ चुनाव के लिए उम्मीदवारों को शार्टलिस्ट कर रही है। पार्टी

15 महीने कमलनाथ के बनाम 18 साल

मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव कई मायनों में खास होने वाल है। क्योंकि इस बार न बीजेपी के पास और न ही कांग्रेस के पास कोई ऐसा मुददा है जिसे लेकर वह मतदाताओं के बीच जा सके। केवल घोषणाओं और गारंटी के बल पर दोनों पार्टियां चुनाव मैदान में हैं। मध्यप्रदेश में इससे पहले वाले चुनावों को देखें तो हर बार कोई बड़ा या प्रभावी मुददा रहा है जिसके बलबूते वह मैदान में कूंदी। लेकिन इस बार कोई लहर या मुद्दा दिखाई नहीं दे रहा है। 2003 के चुनाव में सड़क, पानी, बिजली और दलित एजेंडा जैसे मुद्दों पर जनता ने तत्कालीन कांग्रेस सरकार को उखाड़ फेंका था। 2008 के चुनाव में कांग्रेस गुटबाजी के चलते हारी। 2013 में कांग्रेस नेतृत्व वाली केंद्र की तत्कालीन यूपीए सरकार के सत्ता विरोधी रुझान और देश में मोदी लहर के चलते कांग्रेस को प्रदेश की सत्ता से बाहर रहना पड़ा। 2018 में तस्वीर बदली और भाजपा को सत्ता विरोधी रुझान व कांग्रेस के किसान कर्जमाफी के नारे ने चुनाव हरा दिया। 2023 के विधानसभा चुनाव की तस्वीर पिछले चार चुनावों से अलग रहने की संभावना है। इस बार कोई लहर या बिजली, सड़क, पानी जैसे मुद्दे नहीं हैं, जो चुनावी तस्वीर बन रही है उसमें कमलनाथ के 15 महीने बनाम शिवराज के 18 साल पर ही मतदाताओं की मुहर लगेगी। 2003 में जिन मुद्दों पर कांग्रेस को हार का सामना करना पड़ा, सरकार बदलने वाले वे सारे मुद्दे खत्म हो गए हैं। वहीं इतिहास की बात करें तो बीजेपी के लिए 2008 का चुनाव बेहद चुनौतीपूर्ण था। शिवराज सिंह चौहान की लोकप्रियता दांव पर थी, उमा भारती की भारतीय जनशक्ति पार्टी भी मैदान में थी। कांग्रेस की हार का कारण गुटबाजी बनी। 2013 के चुनाव में कांग्रेस को अपनी ही यूपीए गठबंधन की केंद्र सरकार की एंटी इनकंबेंसी का प्रदेश में सामना करना पड़ा। देश में मोदी लहर थी। 2018 में आरक्षण और एससी-एसटी एक्ट का मुद्दा हावी रहा। पदोन्नति में आरक्षण और एससी-एसटी एट्रोसिटी एक्ट का मुद्दा गरमाया हुआ था। यही वजह रही कि भाजपा 2018 के चुनाव में बहुमत नहीं ला पाई थी। ये तो पहले से ही तय माना जा रहा था कि मध्य प्रदेश निकायों के नतीजे 2023 में होने वाले विधानसभा चुनावों का ट्रेलर होंगे। अब ये तस्वीर भी साफ भी हो चुकी है कि 2023 के चुनाव में बीजेपी-कांग्रेस में कैसा संघर्ष होने वाला है। अब ये तस्वीर भी साफ भी हो चुकी है कि 2023 के चुनाव में बीजेपी-कांग्रेस में कैसा संघर्ष होने वाला है। जो संकेत मिले हैं, या जो ट्रेंड दिखे हैं, उससे साफहै कि दोनों ही पार्टियों के लिए 2023 का संघर्ष कड़ा रहने वाला है। निकाय के नतीजों से जो तस्वीर निकलकर सामने आई है उसके

की स्क्रीनिंग प्रक्रिया से यह सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी कि उम्मीदवारों का चयन उनके संबंधित विधानसभा क्षेत्रों में जीतने की क्षमता के आधार पर किया जाता है। राज्य की बीजेपी सरकार की विफलताओं पर अभियान भी तैयार किया जा रहा है। कांग्रेस का अभियान किसानों पर भी केंद्रित होगा, जहां यह वादा को पूरा करने में विफल बीजेपी सरकार की असफलताओं को उजागर करेगा।

आदिवासी समाज के वोटर में निगाहें- मध्यप्रदेश की सियासत में इन

शिवराज के पर केन्द्रित होगा 2023 का चुनाव

मुताबिक चाहे बीजेपी हो या कांग्रेस राह किसी भी दल के लिए आसान नहीं है। नतीजे बताते हैं कि मुकाबला जोरदार होगा और किसी भी दल को कमतर आंकना राजनीतिक अक्लमंदी तो कतई नहीं होगी। इससे पहले हुए निकाय चुनाव और इस बार के निकाय चुनाव के नतीजों का विश्लेषण इस पूरे समीकरण को और उलझा देता है। दरअसल, पिछले चुनाव में बीजेपी ने सभी 16 निगमों में जीत हासिल की थी, लेकिन इस बार 07 सीटें उसके हाथ से खिसक गईं। जिस कांग्रेस के पास पिछली बार एक भी सीट नहीं थी, वो इस बार 5 सीटें जीत गई। हालांकि, कांग्रेस को छोटे शहरों में झटका लगा है, जबकि छोटे शहरों में बीजेपी की शानदार जीत हुई है। इसीलिए कहा जा रहा है कि 2023 में जहां कांग्रेस के सामने छोटे शहरों में आधार बढ़ाने की चुनौती होगी तो वहीं बीजेपी के लिए बड़े शहरों खासकर अपने गढ़ में दम दिखाने का दारोमदार होगा। इसका मतलब है कि न सिर्फ पार्टियों को अपना वोटबैंक बढ़ाना होगा, बल्कि जिन इलाकों को पारंपरिक गढ़ माना जाता है वहां पकड़ और मजबूत करने के साथ-साथ दूसरे दलों के प्रभाव वाले इलाकों और वोटबैंक में भी सेंध लगानी होगी। पहले ये माना जा रहा था कि निकायों में एकतरफा मामला ना हो जाए, लेकिन जिस तरह से कांग्रेस के साथ आम आदमी पार्टी, जयस और एआईएमआईएम का दम दिखा है, उससे साफ है कि 2023 के चुनाव में भी कड़ी टक्कर देखने को मिल सकती है। वैसे सवाल तो ये भी है कि पार्टियों को 2023 के लिए क्या सबक मिला? तो टिकट क्राइटेरिया में बदलाव करना होगा, दमखम वालों को ही टिकट में प्राथमिकता देनी होगी। प्रत्याशी चयन में दिग्गजों की सहमति जरूर हो, सिर्फ एक की पसंद का ख्याल ना रखा जाए। भितरघात से बचने के लिए सबका साथ जरूरी होगा, इसके साथ ही संगठन की बातों की अनदेखी ना हो, हर हाल में एकजुटता बनी रहे। ये कुछ ऐसे सबक हैं, जिनकी अनदेखी पार्टियों को 2023 में भारी पड़ सकती है, क्योंकि कहीं ना कहीं इन बातों की निकाय चुनाव में अनदेखी हुई है, और उसी वजह से पार्टियों को झटका लगा है। ऐसे में अगर इतना कुछ होने के बाद भी 2023 में इन गलतियों को सुधारा नहीं गया तो पार्टियों को फिर इसका नुकसान उठाना पड़ सकता है। यही कारण है कि इस बार दोनों प्रमुख पार्टियां हर एक मुददे पर फूंक-फूंक कर कदम रख रही हैं और कोई भी किसी प्रकार का जोखिम लेने को तैयार नही है। इस चुनाव को पार्टियां बेहद गंभीरता से देख रही हैं और प्रयास कर रही हैं कि किसी भी तरह से सत्ता हासिल की जाए।

दिनों समाज का सबसे पिछड़ा तबका यानी आदिवासी राजनीतिक दलों की जुबान पर है। प्रदेश की करीब 02 करोड़ से ज्यादा आदिवासी आबादी को लुभाने के लिए सत्ताधारी भाजपा और विपक्षी दल कांग्रेस के नेता जोर लगा रहे हैं। पिछले चुनाव में आदिवासी क्षेत्रों में कांग्रेस को बढ़त मिली तो 15 साल बाद बीजेपी को सत्ता से दूर होना पड़ा। पिछले चुनाव में हुई चूक को भाजपा दोहराना नहीं चाहती। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने आदिवासी वर्ग को पार्टी से जोड़ने के लिए पेसा कानून लागू

वादों के बीच कर्ज में डूबा मध्यप्रदेश

चुनावों के पहले सरकारों के लिए वादा करना और घोषणाओं से मतदाताओं को लुभाना आम बात हो गई है। हर एक पार्टी ऐसा ही करती है। मध्यप्रदेश भी इससे अछूता नहीं है। मध्यप्रदेश में जनकल्याणकारी योजनाएं पहले से ही चल रही है। ऐन चुनाव के पहले मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने लाड़ली बहना नाम से महिलाओं को 1000 रू. प्रतिमाह देने की एक और योजना शुरू की। कांग्रेस ने इस राशि को बढ़ाकर 1500 प्रतिमाह करने के साथ-साथ 500 रुपए में गैस सिलेंडर, 100 यूनिट फ्री बिजली जैसी घोषणाएं कर डालीं। शह और मात के इस खेल में माहिर शिवराज सिंह भी तत्काल 1000 की राशि को क्रमश: 3000 रुपए तक बढ़ाने का काउंटर आफर लेकर सामने आ गए। सरकार में बैठी बीजेपी और कांग्रेस दोनों ही यह बताना जरूरी नहीं समझते कि इन योजनाओं पर होने वाला भारी भरकम पैसा आएगा कहां से? प्रदेश के कर्ज में हुई ताबड़तोड़ बढ़त तो यही बताती है कि अंतत: और कर्ज लेकर ही इन योजनाओं पर खर्च किया जाएगा। पिछले वर्ष ही प्रदेश का कुल कर्ज बोझ सवा तीन लाख करोड़ से अधिक हो चुका है। मौजूदा वर्ष में भी 55 हजार करोड़ रुपए कर्ज प्रस्तावित है जिससे प्रति व्यक्ति पर कर्ज का भार बढ़कर लगभग 50 हजार रुपये हो जाएगा।भले ही तर्क दिया जावे कि यह कर्ज केंद्र सरकार और रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित सीमा के अंदर है मगर प्रश्न यह उठता है कि कर्ज की रकम बजाय ऐसे संसाधनों में लगाने के जिनके रिटर्न से अदायगी संभव हो सके, राजनीतिक रेवड़ी बांटने में किया जाना कहां तक उचित है? सुप्रीम कोर्ट चुनाव के पहले के

किया है। आदिवासियों से जुड़ी तमाम योजनाओं, जनजातीय जननायकों की प्रतिमाएं लगवाने और स्मारकों का विकास कराने जैसे काम तेजी से शुरू किए हैं। 15 नवंबर से मप्र में पेसा कानून प्रभावी होने के बाद सीएम खुद आदिवासी क्षेत्रों में जाकर पेसा जागरूकता शिविर लगाकर आदिवासियों से सीधे जुड़े। मप्र के 20 जिलों के 89 ब्लाक आदिवासी बहुल हैं।

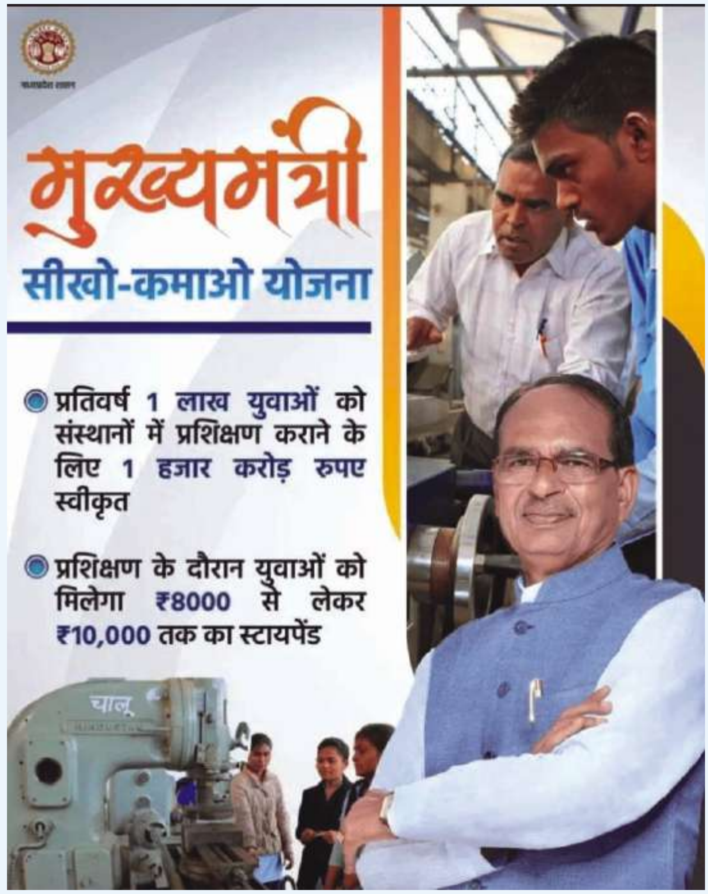

रेवड़ी कल्चर पर गहरी नाराजगी जता चुका है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी भी कह चुके हैं कि वोट के लिए मुफ्त सुविधाएं बांटने वाला कल्चर आर्थिक विकास के लिए बहुत महंगा पड़ेगा और युवाओं के वर्तमान को खत्म करके भविष्य को अंधेरे में धकेल देगा। जो लोग मुफ्त की सुविधाएं बांटने का ऐलान करते हैं, वे बुनियादी ढांचा बनाने और देश के भविष्य को संवारने में कोई योगदान नहीं देते। मगर लगता है कि उनकी अपनी पार्टी समेत कोई भी उनकी बात सुनने को तैयार नहीं है। यह कल्चर भले ही राजनीतिक हित साधता हो और निम्नतम गरीब तबके को तात्कालिक फायदा पहुंचाता हो मगर वर्ग भेद भी उत्पन्न करता है। मध्यम वर्ग को इसके फायदे तो नहीं पहुंचते मगर उसे बढ़े करों, कीमतों और संसाधनों की कमी से उपजी स्तरहीन जनसुविधाओं का बोझ ज़रूर सहना पड़ता है। पूर्व मुख्यमंत्री उमा भारती अपनी ही सरकार को कह रही हैं कि सभाओं के आयोजन पर करोड़ों खर्च हो रहे हैं और सरकारी अस्पतालों में सुविधाओं के अभाव में मरीज गर्मी में तड़प रहे हैं। बिजली के झूलते खंभे, लटकते तार और ट्रांसफार्मर के बक्सों के गायब ढक्कन जहां तहां नजर आते हैं। भोपाल स्थित प्रदेश के सबसे महत्वपूर्ण सरकारी कार्यालय सतपुड़ा भवन में आग लगती है और 16 घंटे तक धधकती रहती है। करोड़ों खर्च कर आयोजित तमाम उद्योग मेलों, विदेश यात्राओं के बावजूद प्रदेश में औद्योगिक विकास की दर जहां की तहां है। आलम यह है कि निर्माणाधीन बांध पहली बरसात में बह जाते हैं। ताज़ा ख़बर यह है कि 3000 करोड़ के ई टेंडर घोटाले में हार्ड डिस्क में टेंपरिंग की पुष्टि होने के बाद भी जांच एजेंसी यह पता नहीं कर पाई कि छेड़छाड़ किसने की थी। अब सुना है कि पुलिस क्लोजर रिपोर्ट लगाने की तैयारी में है। आबकारी राजस्व में वृद्धि का फायदा सरकारी मिली भगत से शराब माफ़िया उठाता है। गिनाने बैठें तो गिनती कम पड़ जाए वाली स्थितियां है। कोई अपने दामन में झांकने को तैयार नहीं है। पिछले दिनों हुए कर्नाटक विधानसभा चुनावों में बीजेपी और कांग्रेस दोनों ने ही झोला भर भरकर मुफ़्त वाले वादे किए। अब उसी परिपाटी पर अन्य पार्टियां भी चलने लगी हैं और मुफ्त की रेवड़ी बांटने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ रही हैं।

इनमें सबसे ज्यादा इंदौर संभाग के 40 विकासखंड आदिवासी बहुल हैं। इसी वजह से लगातार हो रहे इन राजनीतिक कार्यक्रमों का केंद्र इंदौर ही है। दूसरे नंबर पर जबलपुर संभाग के 27 ब्लाक जनजातीय बाहुल्य हैं। अगले साल होने वाले विधानसभा चुनाव के नजरिए से देखें तो साल भर तक आदिवासी राजनीति का सबसे बड़ा केंद्र इंदौर ही रहा। पूर्व कांग्रेस अध्यक्ष राहुल

बड़ा सवाल : क्या बीजेपी के पास मध्यप्रदेश में नहीं है जिताऊ चेहरा?

बीते एक वर्ष के अंदर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी से लेकर केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह खुद पांच से छः बार मध्यप्रदेश का दौरा कर चुके हैं। प्रधानमंत्री मोदी और गृहमंत्री अमित शाह के लगातार दौरों ने प्रदेश की भाजपा और सत्ता, सगंठन पर सवालियां निशान खड़ा कर दिया है। भाजपा के शीर्ष नेताओं के लगातार हो रहे दौरों से इस बात का आंकलन भी लगाया जाने लगा है कि प्रदेश में भाजपा के पास कोई ऐसा बड़ा चेहरा नहीं है जिसके नाम पर प्रदेश भाजपा जनता से वोट मांग सके। यही कारण है कि मोदी और अमित शाह लगातार प्रदेश में डेरा डाले हुए हैं। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अगर बात करें तो मोदी खुद दस महीने में सात बार मध्यप्रदेश का दौरा कर चुके हैं। मोदी के इस दौरे की शुरुआत सितंबर 2022 में कूनो पालपुर से हुई थी। इसके बाद महाकाल कॉरीडोर का शुभारंभ, दो बार वंदे मातरम् ट्रेन का शुभारंभ और रीवा में पंचायती राज दिवस का आयोजन, शहडोल दौरा। केंद्र सरकार के प्रमुख आयोजनों का मध्यप्रदेश में होना और उनमें शामिल होने मोदी का आना साफतौर पर इस बात की ओर इशारा करता है कि आगामी विधानसभा चुनाव में प्रदेश भाजपा की स्थिति को लेकर शीर्षस्थ नेता भी खतरा महसूस कर रहे हैं। दूसरी तरफ केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह भी मोदी की राह पर चलते हुए निरंतर प्रदेश के अलग-अलग दौरे कर भाजपा के सत्ता और संगठन को मजबूती देने का प्रयास कर रहे हैं। अगर हम मोदी और शाह

गांधी भी इसी आदिवासी बाहुल्य इलाके में अपनी भारत जोड़ो यात्रा निकाल चुके हैं।

मध्यप्रदेश के 20 जिलों में कुल 89 विकासखंड आदिवासी क्षेत्रों में हैं। प्रदेश की

लगभग 84 सीटों पर आदिवासी वोटर ही तय करते हैं कि कौन सी पार्टी जीतेगी।

की रैलियों पर नजर डाले और इनके आवभगत में होने वाले खर्चों पर नजर डाले तो शायद हम इस बात का आंकलन भी नहीं कर पायेंगे कि प्रदेश सरकार ने इनके आवभगत में कितना करोड़ रूपये फूंक दिया। सूत्रों के अनुसार एक-एक आयोजन में प्रदेश सरकार ने 50 करोड़ से अधिक की राशि को खर्च किया। जबकि देखा जाये कि इतने आयोजन में खर्च हुए बजट से अगर सरकार चाहती तो जनता के हितों में कई प्रमुख फैसले करती जिसका फायदा जनता को मिलता। लेकिन प्रदेश के मुखिया शिवराज सिंह चौहान ने इस तरह का काम करना बिल्कुल उचित नहीं समझा। अब देखने वाली बात यह है कि क्या सच में इन रैलियों का कोई फायदा आगामी विधानसभा चुनाव में भाजपा को मिलेगा या फिर यह महज एक दिखावा बनकर रह जायेगा जिसके खर्च का भुगतान प्रदेश की जनता को भुगतना पड़ेगा। मोदी और शाह के लगातार मप्र के दौरों को लेकर सियासी गलियारे में इस बात को लेकर चर्चा तेज है कि क्या इस बार भाजपा मोदी और शाह के चेहरे पर ही चुनावी मैदान में उतरना चाहती है। क्या प्रदेश में ऐसा कोई जनप्रिय और लोकप्रिय नेता नहीं है जिसके चेहरे पर प्रदेश में भाजपा सत्ता पर कायम रह सके। अब देखने वाली बात यह है कि क्या शाह और मोदी के दौरों का परिणाम प्रदेश भाजपा को मिलेगा या फिर एक बार फिर मोदी और शाह को यहां से निराश होकर जाना होगा। मोदी, शाह सहित प्रदेश संगठन के वरिष्ठ पदाधिकारी विगत कई महीनों से विंध्य, महाकौशल पर अधिक फोकस कर रहे हैं। बताया जा रहा है कि विंध्य, महाकौशल दो ऐसे क्षेत्र हैं, जहां भाजपा को कमजोर बताया जा रहा है। यही कारण है कि प्रदेश संगठन इन क्षेत्रों पर अधिक फोकस कर रहा है।

मध्यप्रदेश में कांग्रेस सांसद राहुल गांधी की भारत जोड़ो यात्रा का रूट भी आदिवासी बहुल इलाकों का रखा गया था।

50 प्रतिशत से ज्यादा आदिवासी आबादी वाले सबसे ज्यादा गांव मध्यप्रदेश में- केंद्र सरकार की एक रिपोर्ट

अभी हाल ही में, कांग्रेस की प्रियंका गांधी ने मध्यप्रदेश के जबलपुर से कांग्रेस का चुनावी शंखनाद किया। कांग्रेस के इस आयोजन में हजारों की संख्या में लोग एकत्रित हुए। प्रियंका गांधी की सभा में कांग्रेस के सभी प्रदेश के दिग्गज नेताओं का एक साथ में आकर दर्शाता है कि प्रदेश में कांग्रेस एक है। सबका एक ही मकसद है प्रदेश में कांग्रेस की सरकार बनवाना। निश्चित ही प्रियंका गांधी ने इस सभा के माध्यम से प्रदेश में कांग्रेस के प्रति माहौल बनाया है जो 2023 के विधानसभा चुनाव में फायदेमंद होगा।

बताती है कि देश में 50 प्रतिशत या इससे ज्यादा जनजातीय आबादी वाले कुल 36,428 गांव हैं। आधी से ज्यादा आदिवासी आबादी वाले गांवों में मप्र देश में पहले नंबर पर है। एमपी के 7307 गांवों में आदिवासियों की आबादी 50प्रतिशत से ज्यादा है। दूसरे नंबर पर राजस्थान में 4302 गांवों में 50प्रतिशत आबादी आदिवासियों की है। इसके बाद छत्तीसगढ़ में 4029, झारखंड में 3891, गुजरात में 3764, महाराष्ट्र में 3605 गांवों में आधे से ज्यादा आदिवासी रहते हैं। मप्र विधानसभा में कुल 230 सीटें हैं इनमें से 47 आदिवासी वर्ग के लिए आरक्षित हैं। साथ ही आदिवासियों की बड़ी आबादी होने से प्रदेश की 84 सीटों पर

कमलनाथ ने संभाली विस चुनाव की कमान

कांग्रेस भी विधानसभा चुनाव- 2023 को लेकर गंभीर है और पूरी कमान प्रदेशाध्यक्ष कमलनाथ संभाले हुए हैं। वे खुद लगातार समीक्षा बैठकें कर रहे हैं और जमीनी स्तर की रिपोर्ट भी तलब करने में लगे हैं। इस बार कांग्रेस पार्टी में जिस उम्मीदवार की जीतने की क्षमता ज्यादा होगी, उसे टिकट देने में प्राथमिकता दी जाएगी। निकाय चुनाव में जिनका प्रदर्शन अच्छा रहा है, उनका ध्यान रखा जाएगा और तीसरी सबसे अहम बात पार्टी के सर्वे में नाम होना है। आपको बता दें कि गुजरात में खराब प्रदर्शन के बाद भी हिमाचल और कर्नाटक की जीत से कांग्रेस उत्साहित है। यही वजह है कि पार्टी एमपी में भी सत्ता में आने की पूरी उम्मीद लगा रही है। इसके लिए रणनीति तैयार की जा रही है और पार्टी एक साल पहले से ही तैयारियों में जुटी हुई है। प्रदेश अध्यक्ष कमलनाथ मिशन 2023 की तैयारियों में पहले से जुट गए हैं। भोपाल में लगातार वह अपने वरिष्ठ नेताओं के साथ मंथन कर रहे हैं। सम्मेलन के जरिए कार्यकर्ताओं में जोश भर रहे हैं। साथ ही बीजेपी से सीखने की नसीहत दे रहे हैं। कमलनाथ ने 2023 में पार्टी की जीत पक्की करने के लिए फार्मूला तैयार कर लिया है। इस बार जोर उन सीटों पर ज्यादा है, जहां कांग्रेस लगातार हार रही है। 2023 की तैयारियों में जुटी कांग्रेस ने प्रदेश में कुछ ऐसे सीटों की पहचान की है, जहां पार्टी लगातार हार रही है। पूरे प्रदेश में कांग्रेस ने ऐसी 70 सीटें चिह्नित की है, जहां वह जीत के लिए तरस रही है। इन सीटों पर वर्षों से बीजेपी का कब्जा है। ऐसे में पार्टी का मानना है कि अगर इन सीटों पर जीत हासिल करनी है तो वहां से चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों के पास मौका होना चाहिए। वहीं, कांग्रेस की विशेष नजर उन सीटों पर जहां से बीजेपी के लोग सात से आठ बार से लगातार चुनाव जीत रहे हैं।

आदिवासी वोटर्स निर्णायक हैं। प्रदेश में 2013 के विधानसभा चुनाव में आदिवासी वर्ग के लिए आरक्षित इन 47 सीटों में से भाजपा ने 31 सीटें जीती थीं। कांग्रेस के खाते में सिर्फ 15 सीटें आई थीं, लेकिन 2018 के चुनाव में भाजपा को इसी ट्राइबल बेल्ट से करारी हार मिली और वो सिर्फ 16 पर ही जीत दर्ज कर सकी। कांग्रेस ने 30 सीटें जीती थीं और भाजपा सत्ता से बाहर हो गई थी। 2018 के विधानसभा चुनाव में इन्हीं आदिवासी वोटों के कारण ही 15 साल बाद कांग्रेस की सत्ता में वापसी हुई थी।

शिवराज सरकार ने पेसा एक्ट लागू कर खेला बड़ा दांव- शिवराज सरकार ने 15 नवंबर 2023 को प्रदेश में पेसा एक्ट

किसान और रोजगार पर दांव लगायेंगी कांग्रेस-बीजेपी

चुनाव आते ही पार्टियों द्वारा तरह-तरह के वादे या उपलब्धियों को गिनाना शुरू कर दिया जाता है। और इन उपलब्धियों को इतना बड़ा चढ़ा कर बताया जाता है कि देखने या पढ़ने वाले ही अचरज में पड़ जाते हैं। 2018 में कांग्रेस ने किसान के नाम पर ही मध्यप्रदेश में मतदाताओं को आकर्षित करने में सफलता हासिल की थी। इसलिए अब भी कयास लगाए जा रहे हैं कि कांग्रेस इन्हीं मुद्दों को थामे रखना चाहेगी। 2023 चुनाव आते ही कुछ मुद्दे जैसे बेरोज़गारी, महंगाई, किसान और महिला सशक्तिकरण, खुद-ब-खुद ट्रेंड में आ जाते हैं यूं तो इन चुनावों के लिए सभी दल सोच समझकर मुद्दों का चुनाव कर रहे हैं, लेकिन बीजेपी और कांग्रेस, दोनों ही प्रमुख दल, इस विधानसभा चुनाव में अपनी पुरानी गलतियां नहीं दोहराना चाहते हैं। एक तरफ भारतीय जनता पार्टी अपने लिए सत्ता तक का रास्ता चुन रही है और विकास यात्रा के साथ अपनी चुनावी तैयारियों में जुट गई है, वहीं राहुल गांधी की सफल भारत जोड़ो

(पंचायत एक्सटेंशन टू शेड्यूल्ड ट्राइब्स) लागू किया है। राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने शहडोल से इसकी शुरुआत की थी। एमपी में पेसा कानून लागू होने के बाद से ही सीएम शिवराज सिंह चौहान खुद आदिवासी बाहुल्य जिलों में जाकर जागरूकता अभियान चलाया।

क्या अन्य पार्टियां बिगाड़ सकती हैं सियासी गणित?- मध्यप्रदेश में आम आदमी पार्टी की चर्चा शुरूहो गई हैं। यहां पर आप को तीसरी पार्टी के रूप में देखा जाने लगा है। आप प्रदेश में सभी 230 सीटों पर चुनाव लड़ने का ऐलान कर चुकी है। अब सवाल उठने लगा है कि क्या आप प्रदेश में कांग्रेस और बीजेपी का सियासी गणित बिगाड़ सकती है। वैसे आप ने प्रदेश में अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी है। मप्र में पहली बार आम आदमी पार्टी का मेयर बना

यात्रा से उत्साहित कांग्रेस भी विधानसभा 2023 के लिए कमर कस चुकी है। इसी के साथ दोनों पार्टियां अपने अपने चुनावी मुद्दों के चयन में भी काफी सतर्कता बरत रही हैं। 2018 में कांग्रेस ने किसान और कर्ज़ माफी के नाम पर ही मध्यप्रदेश में मतदाताओं को आकर्षित करने में सफलता हासिल की थी। इसलिए अब भी कयास लगाए जा रहे हैं कि कांग्रेस इस बार भी इन्ही मुद्दों को थामे रखना चाहेगी, हालांकि उम्मीद है इन चुनावों में कांग्रेस बेरोजगारी के मुद्दे को जमकर भुनाएगी।

भाजपा की बात करें तो मध्यप्रदेश में पार्टी हर सर्वे में जीत से दूर नज़र आ रही है। इसकी एक वजह एंटी इनकम्बेंसी को भी माना जा सकता है। इतने सालों तक सत्ता में बने रहने के बावजूद कुछ मुद्दों पर बीजेपी अब भी कमज़ोर ही बनी हुई है। प्रदेश में जारी बीजेपी की विकास यात्रा का, खासकर ग्रामीण इलाकों में बहिष्कार इस बात का सबूत है कि मौजूदा सरकार से वो मतदाता खफा है जो असल में पोलिंग बूथ तक वोट देने पहुंचता है। शायद इसीलिए शिवराज सरकार साहित्य कला से लेकर महिला और युवाओं को आर्थिक लाभ लेकर लुभाने में जुटी है। ऐसे में यह कहना भी गलत नहीं होगा कि कांग्रेस या अन्य सभी दलों का, बीजेपी को घेरने के लिए इस बार सबसे बड़ा मुद्दा रोजगार ही होगा। बेरोज़गारी के बढ़ते ग्राफको हथियार बनाकर राजनैतिक दल सत्ता की रेस में आगे निकलना चाहते हैं। यही एक मुद्दा है जिसे बीजेपी अपना हथियार नहीं बना पा रही है। इसमें भी कोई शक नहीं कि अब कांग्रेस सत्ता में आने के लिए किसानों को अपनी सीढ़ी बनाने के बजाय, ऐसा मुद्दा तलाशना चाहेगी जिसका बीजेपी के पास कोई तोड़ न हो। विधानसभा चुनाव में जहां एक्ष तरफ बीजेपी के लिए जीत का मुद्दा पिछड़ा वर्ग, दलित और आदिवासी समाज हो सकते हैं वहीं, कांग्रेस का मुख्य दांव केवल बेरोज़गारी के रास्ते युवाओं पर ही सधा होगा। और इस बार बीजेपी को घेरने के लिए और सत्ता तक अपना रास्ता बनाने के लिए कांग्रेस इस एक मुद्दे को अपना चुनावी मुद्दा बनाएगी। जो उन्हें जीत की सीढ़ी तक ले जाने का काम करेंगे।

है। सिंगरौली में आप प्रत्याशी रानी अग्रवाल ने भाजपा के उम्मीदवार को हराया। रानी भाजपा की नेता रह चुकी हैं। हालांकि ओवर ऑल आंकडों को देखते हैं तो यहां भी आम आदमी पार्टी ने करीब 60 से ज्यादा वार्डों में कांग्रेस का खेल बिगाड़ा। बुरहानपुर, खंडवा और उज्जैन में मेयर सीट पर भाजपा की जीत हुई। इन तीनों सीटों पर भी आम आदमी पार्टी और एआईएमआईएम की वजह से कांग्रेस की हार हुई। बुरहानपुर में एआईएमआईएम प्रत्याशी को 10 हजार से ज्यादा वोट मिले। इसी तरह उज्जैन में भाजपा उम्मीदवार केवल 736 वोटों से जीती। अब यह माना जा रहा है कि कांग्रेस-भाजपा की लड़ाई हो वहीं आप की एंट्री होती है। आमतौर पर कई राज्यों में कांग्रेस को आसानी से मुस्लिम वोटर्स का साथ मिल जाता है। अब एआईएमआईएम प्रमुख

सर्वे में बीजेपी की हालत पतली

चुनाव के पहले अब बीजेपी में टिकट को लेकर रणनीति बनने लगी है। इसके साथ ही मापदंड भी तय किए जा रहे हैं। मध्य प्रदेश में टिकट वितरण को लेकर सरकार और संगठन के द्वारा तीन अलग-अलग सर्वे कराए गए हैं। माना जा रहा है कि सर्वे के आधार पर ही मध्य प्रदेश बीजेपी में टिकट वितरण होगा। हालांकि, पार्टी अभी जमीनी स्तर पर विधानसभा चुनाव की तैयारियों में लगी हुई है। इसे लेकर वह हर वर्ग को साधने का प्रयास कर रही है। बीजेपी ने जो 03 अलग-अलग सर्वे कराए हैं, उनमें से लगभग 50 विधायकों की हालत खराब बताई गई है। माना जा रहा है कि तीनों सर्वे में जिन विधायकों की रिपोर्ट नेगेटिव है, पार्टी उनका टिकट काट सकती है। इससे लेकर पार्टी नेताओं में खलबली मचना स्वाभाविक है। यह तय किया गया है कि जो प्रत्याशी दो या तीन बार से लगातार चुनाव हार रहे हैं, ऐसे नेताओं पर पार्टी दांव नहीं लगाएगी। बीजेपी में कई दिग्गज मंत्रियों की स्थिति भी खराब है, ऐसे में क्या पार्टी उन मंत्रियों के टिकट काटेगी? बहरहाल देखना यह होगा कि दोनों ही पार्टियां टिकट वितरण के बाद उम्मीदवारों में होने वाले असंतोष से कैसे निजात पाती है।

असदुद्दीन ओवैसी और अरविंद केजरीवाल इसी को तोड़ने में जुटे हैं। जहां-जहां कांग्रेस का सीधा मुकाबला भाजपा से है, वहां आम आदमी गढ़ी की एंट्री होती है। अब केजरीवाल 2023 के मप्र के चुनाव में दल-बल के साथ उत्तर चुके हैं। दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल ने भोपाल में आयोजित एक रैली चुनावी बिगुल फेंक्रते हुए घोषणा की कि पंजाब की तर्ज पर ही मप्र में अगर उनकी सरकार आई तो बिजली, स्कूल और स्वास्थ्य सुविधाओं का मुफ्त कर दिया जाएगा। प्रदेश में आम आदमी पार्टी ने खुद का तेजी से विस्तार करना शुरू किया।

पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय लगातार मध्यप्रदेश का दौरा कर कांग्रेस कार्यकर्ताओं में जान फूंक रहे हैं। दूसरी ओर कांग्रेस ने विधानसभा चुनाव में टिकट की दावेदारी कर रहे लोगों पर ध्यान देते हुए प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह को 66 विधानसभा सीटों पर कांग्रेस को मजबूत बनाने की जिम्मेदारी सौंपी गई है। हालांकि, कांग्रेस को भी टिकट वितरण के बाद दावदारों में होने वाले असंतोष का डर सता रहा है, जिसे लेकर वह हर विधानसभा में उम्मीदवारों और कार्यकर्ताओं से लगातार संपर्क साधी हुई है।

मप्र में 170 सीटों पर किसानों का असर- प्रदेश की 80 फीसदी आबादी ग्रामीण इलाकों से आती है। प्रदेश की राजनीति में किसानों का वर्चस्व है। कृषि प्रधान राज्य होने के नाते यहां की राजनीति भी कृषि के इर्द-गिर्द घूमती रहती है। चुनावों के समय भी किसानों को लेकर तरह-तरह के लोकलुभावन वादे किये जाते हैं। बताया जाता है कि 2018 का विधानसभा चुनाव कांग्रेस ने किसानों का कर्जा माफकिये जाने के वादे के कारण जीता था। वहीं बीजेपी भी किसानों को लुभाने में कोई कसर नहीं छोड़ती है। मप्र में 230 विधानसभा सीटों में से 170 सीटें ऐसी हैं, जहां किसान वोट निर्णायक भूमिका में हैं। मतलब साफ है विधानसभा चुनाव से पहले जो दल किसानों का भरोसा जीतने में सफल होगा सत्ता की चाबी उसी पार्टी के हाथ में होगी।

प्रदेश में भाजपा और कांग्रेस दोनों पार्टियां चुनाव जीतने का दावा कर रही है। लेकिन इस बार के चुनाव में दोनों पार्टियों को कई बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। भाजपा में समन्वय का अभाव है। इसका खुलासा खुद भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष जेपी नड्डा ने भोपाल प्रवास के दौरान किया था।

आंतरिक सर्वे ने उड़ायी बीजेपी की नींद - प्रदेश में भाजपा और कांग्रेस दोनों पार्टियां चुनाव जीतने का दावा कर रही है। लेकिन इस बार के चुनाव में दोनों पार्टियों को कई बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। भाजपा में समन्वय का अभाव है। इसका खुलासा खुद भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष जेपी नड्डा ने भोपाल प्रवास के दौरान किया था।

2023 का विधानसभा चुनाव बीजेपी के लिए आदिवासियों के इर्द-गिर्द घूम रहा है। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान पिछले एक साल में आदिवासियों से जुड़े कई आयोजन प्रदेश में करवा चुके हैं।

इसके साथ ही चुनाव के पहले सीटों और प्रत्याशियों को लेकर किए जा रहे पार्टियों के अंदरूनी सर्वे बाहर आने लगे हैं। इसी के हवाले से राजनीतिक दलों के जिम्मेदार बयानबाजी भी कर रहे हैं। कांग्रेस-भाजपा दोनों ही पार्टियों ने जीतने वाले उम्मीदवारों पर ही दांव लगाने का निर्णय लिया है। दोनों पार्टियों के ऐसे उम्मीदवारों की टिकट पर खतरा मंडरा रहा है, जो वर्तमान में विधायक हैं परंतु उनका प्रदर्शन खराब है। दोनों पार्टियों के प्रभारी नेताओं ने कहा है कि वे स्वयं के बजाय पहले पार्टी को प्राथमिकता में रखें। विधायक हो या बड़े नेता सभी को पार्टी की बात माननी होगी। टिकट वितरण में नये चेहरों को जगह मिल सकती हैं। मप्र में भाजपा ने 200 विधानसभा सीटें जीतने का लक्ष्य निर्धारित किया है और इस मिशन की जिम्मेदारी मंत्रियों को दी है। लेकिन पिछले दिनों प्रदेश में निकाली गई विकास यात्रा ने मंत्रियों की सक्रियता और परफार्मेंस की पोल खोलकर रख दी। पार्टी सूत्रों के अनुसार प्रदेश के अधिकांश मंत्रियों के क्षेत्र में भाजपा की स्थिति कमजोर हो रही है। विकास यात्रा के दौरान मंत्रियों के क्षेत्र में ही सबसे अधिक शिकायतें मिली हैं। खासकर पार्टी के पदाधिकारी और कार्यकर्ताओं ने मंत्रियों की शिकायत की हैं। संघ और संगठन को मिले फीडबैक के अनुसार अधिकतर मंत्रियों के खिलाफ शिकायत यह है कि उन्होंने प्रभार वाले जिलों को उपेक्षित छोड़ दिया है और अपने जिले में केवल अपनों को महत्व दे रहे

मप्र में भाजपा ने 200 विधानसभा सीटें जीतने का लक्ष्य निर्धारित किया है और इस मिशन की जिम्मेदारी मंत्रियों को दी है। लेकिन पिछले दिनों प्रदेश में निकाली गई विकास यात्रा ने मंत्रियों की सक्रियता और परफार्मेंस की पोल खोलकर रख दी। पार्टी सूत्रों के अनुसार प्रदेश के अधिकांश मंत्रियों के क्षेत्र में भाजपा की स्थिति कमजोर हो रही है।

मध्यप्रदेश की राजनीति में आदिवासियों का बहुत महत्व है। प्रदेश में लगभग 1.25 करोड़ मतदाता इस इस वर्ग से आते हैं। और यह वर्ग कांग्रेस का समर्थक माना जाता है।

हैं।

गौरतलब है कि 15वीं विधानसभा का दिसंबर 2023 को समाप्त हो रहा है। साल के अंत में रहे विधानसभा चुनाव की तैयारी राजनीतिक दलों ने तेज कर दी हैं। दोनों ही प्रमुख दलों के नेताओं ने आरोप प्रत्यारोप और वादों का सिलसिला भी दिया है। 2018 के विधानसभा चुनाव में प्रदेश में कोई भी पार्टी आंकड़ा (116) नहीं छू पायी थी। कांग्रेस को 01 करोड़ 55 लाख 95 हजार 153 मत प्राप्त हुए थे। कुल मतों का प्रतिशत 40.9 रहा। कांग्रेस ने 229 सीटों पर लड़ा था। 114 सीटों पर प्रत्याशियों को जीत मिली। वहीं भाजपा को 01 करोड़ 65 लाख 42 हजार 980 मत प्राप्त हुए थे। बीजेपी को कांग्रेस से एक प्रतिशत अधिक मत प्राप्त हुए। कुल मतों का प्रतिशत 41

2018 के विधानसभा चुनाव में प्रदेश में कोई भी पार्टी आंकड़ा (116) नहीं छू पायी थी। कांग्रेस को 01 करोड़ 55 लाख 95 हजार 153 मत प्राप्त हुए थे। कुल मतों का प्रतिशत 40.9 रहा। कांग्रेस ने 229 सीटों पर लड़ा था। 114 सीटों पर प्रत्याशियों को जीत मिली। वहीं भाजपा को 01 करोड़ 65 लाख 42 हजार 980 मत प्राप्त हुए थे।

रहा। भाजपा ने प्रदेश की सभी 230 सीटों पर प्रत्याशी उतारे थे। चुनाव में भाजपा के टिकट पर 109 विधायक बने। इस तरह भाजपा को सत्ता से बाहर होना पड़ा। 2018 के विधानसभा चुनाव से सबक लेते हुए भाजपा लगातार रणनीति बनाकर काम कर नही है। वहीं पार्टी के रणनीतिकार वर्तमान विधायकों को स्थिति का आंकलन कर रहे हैं। मुख्यमंत्री शिवराजसिंह चौहान, प्रदेश प्रभारी मुरलीधर राव और प्रदेश अध्यक्ष वीडी शर्मा के अलावा केंद्रीय नेतृत्व और संघ लगातार मंथन और समीक्षा में जुटे हुए हैं। सूत्रों के अनुसार पार्टी में लगभग 40 प्रतिशत चेहरे बदले जा सकते हैं। आने वाले विधानसभा चुनाव में सिर्फ 60 प्रतिशत

विधायकों को ही टिकट मिलेगा, बाकी सभी नए चेहरे होंगे। जिन चेहरों पर दांव लगाया जा रहा है वह जीतने वाले ही होंगे। विधानसभा चुनाव में कांग्रेस ने 150 सीटें जीतने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इसके लिए सभी तरह के प्रयोग किये जा सकते हैं। यह बात भी सामने आ रही है कि कमजोर प्रदर्शन करने वाले लगभग 35 प्रतिशत विधायकों का टिकट खतरे में है।

कांग्रेस ने जिन विधायकों के प्रदर्शन की बात की है उनमें से ज्यादातर नये विधायक हैं। कांग्रेस अपने लक्ष्य को पाने के लिए 230 में से कांग्रेस उन 70 सीटों पर फोकस करेगी, जहां पार्टी को लंबे समय से हार का सामना करना पड़ रहा है। एक बात यह भी निकलकर आई है कि जहां भाजपा मजबूत स्थिति में है, वहां बड़े नेताओं की जगह उनके बेटों को उतारा जाएं। प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष कमलनाथ ने कहा- हमारा फोकस पिछले दो चुनाव में हारी सीटों पर जीत तय करना है। इससे पहले कमलनाथ ने अप्रैल-मई 22 में एक सर्वे कराया था। इसमें विधायकों के कामकाज का मूल्यांकन किया गया था। क्षेत्रीय समस्याओं को लेकर विधायक ने कितनी आवाज उठाई। जनता को कितना वक्त दिया। सोशल मीडिया पर कितने एक्टिव रहे। दूसरे सर्वे में विधायक की लोकप्रियता की जमीनी हकीकत देखी गई। यानी क्षेत्र की जनता उन्हें आगे भी अपना प्रतिनिधि बनाए रखना चाहती है या नहीं? यदि हां तो क्या वजह है और नहीं तो क्या कारण हैं। दूसरे सर्वे में पहले सर्वे के बाद विधायकों की स्थिति में बदलाव का आंकलन भी किया गया है। राज्य की प्रमुख विपक्षी पार्टी कांग्रेस ने शिवराज सरकार को कई मुद्दों पर घेरा है। वह चाहे कानून व्यवस्था की बात रही हो या बेराजगारी की बात रही हो कांग्रेस के शीर्ष नेतृत्व ने सरकार को कटघरें में खड़ा किया है। इसके साथ ही चुनावी नफा-नुकसान को साधने में एक तरफ जहां बीजेपी ने कोई कोर कसर नहीं छोड़ी तो कांग्रेस भी बीजेपी से पीछे नहीं रही। खासकर आदिवासी कार्ड बीजेपी ने पूरे साल खेला। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी से लेकर मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान आदिवासियों से जुड़ा कोई भी ऐसा मौका नहीं छोड़ा जहां बीजेपी ने दस्तक न दी हो। बिरसा मुंडा से लेकर टंटया मामा भील तक से लेकर आदिवासियों को खूब भुनाने की कोशिशें हुईं। इसके अलावा राजनीतिक रूप से और भी कई ऐसी घटनाएं हुई जिन्होंने प्रदेश को हमेशा चर्चा में रखा। पंचायत चुनाव से लेकर नगरीय निकाय चुनाव में राजनीति गरमाती रही। कहा जा सकता है कि पूरे वर्ष सरकार और कांग्रेस हमेशा आमने सामने रहे।

वोट के लिए मतदाता को उपहार भेंट करने की होड़

कर्ज के घी से मुफ्तखोरी की होड़

प्रमोद भार्गव

मध्यप्रदेश में आजकल पांच माह बाद होने वाले चुनावी यज्ञ में कर्ज के घी से मुफ्त की आहुतियां डालने की होड़ मची है। जबकि हमारी लोक संस्कृति में उधार लेकर घी पीने की प्रवृत्ति को घातक माना गया है। लेकिन अब यह प्रवृत्ति इसलिए और घातक हो गई है, क्योंकि राज्य सरकारें कर्ज लेकर खुद तो घी पी ही रही हैं, मतदाता को भी पिलाकर उसकी आदतें खराब कर रही हैं। जब कोई वस्तु या सुविधा व्यक्ति को मुफ्त मिलने लग जाती है तो वह लती और आलसी हो जाता है। मध्यप्रदेश में सत्ता में बनी रहने में लगी भाजपा और सत्ता में आने की होड़ में लगी कांग्रेस इसी होड़ में मतदाता

को निशुल्क उपहारों की झड़ी लगा रही हैं। जबकि प्रदेश सरकार तीन लाख करोड़ रुपए से अधिक के कर्ज में पहले से ही डूबी हुई है। सत्तारुढ़ दल भाजपा के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने राज्य की संस्कारधानी जबलपुर में प्रदेश की सवा करोड़ लाडली बहनों के खाते में प्रतिमाह 1000 रुपए डालने की शुरूआत कर दी। साथ ही यह वादा भी कर दिया कि आगे यह राशी 3000 रुपए तक बढ़ा दी जाएगी। यही नहीं बहनों को स्व-सहायता समूह से जोड़कर लखपति बना देने का भरोसा भी चतुर-सुजान शिवराज ने जता दिया। 12 हजार करोड़ रुपए प्रति माह लाडली बहनों को देकर शिवराज कितने मतदाताओं को लुभा पाएंगे यह तो फिलहाल भविष्य के गर्भ में है, लेकिन इस बंदरबांट के जरिए उन्होंने यह तो तय कर दिया कि जो राज्य फिलहाल तीन लाख करोड़ के कर्ज में डूबा है, यह लोक-लुभावन योजना उसे और ज्यादा कर्ज में डुबो देगी। अब बात कांग्रेस की करते हैं। इसी जबलपुर में कांग्रेस की राष्ट्रीय महासचिव प्रियंका गांधी का 12 जून को

12 हजार करोड़ रुपए प्रति माह लाडली बहनों को देकर शिवराज कितने मतदाताओं को लुभा पाएंगे यह तो फिलहाल भविष्य के गर्भ में है, लेकिन इस बंदरबांट के जरिए उन्होंने यह तो तय कर दिया कि जो राज्य फिलहाल तीन लाख करोड़ के कर्ज में डूबा है,

आगमन हुआ। पहले उन्होंने नर्मदा नदी के गौरी घाट पर देवी की पूजा-अर्चना की, फिर वीरांगना रानी दुर्गावती की प्रतिमा पर माल्यार्पण किया और फिर सभा प्रांगण में पहुंचकर पांच प्रकार की मुफ्त में रेवड़ियां बांटने की गारंटी मतदाता को मंच से दे दी। उन्होंने कहा प्रदेश में कांग्रेस की सरकार बनने के बाद महिलाओं को 1500 रुपए प्रतिमाह, रसोई गैस सिलेंडर में 500 रुपए की छूट, 100 यूनिट बिजली माफ, 200 यूनिट हाफ, पुरानी पेंशन योजना की बहाली के साथ किसानों की कर्जमाफी भी करेंगे। गोया, प्रदेश के दोनों प्रमुख दल मुफ्त का चंदन, घिस मेरे नंदन कहावत चरितार्थ करके चुनावी वैतरणी पार करने की होड़ में लगे हैं। तय है, मुफ्त की इन मुनादियों से जनता को कितना और कब तक लाभ मिलेगा, यह तो संदेह के घेरे में है, लेकिन इतना तय है कि योजनाओं पर अमल हुआ और पांच साल निरंतर चालू रहीं तो उधार

की यह अर्थ व्यवस्था प्रदेश का भट्टा बिठा देगी। इन वादों में विलक्षण एकरूपता है कि दोनों दलों में से किसी ने भी बेरोजगारों को रोजगार और नया उद्योग लगाने की बात नहीं कही।

जरूरतमंद गरीबों को निशुल्क राशन, बिजली, पानी और दवा देने में किसी को कोई ऐतराज नहीं होता, लेकिन वोट पाने के लिए प्रलोभन देना मतदाता को लालची

बनाने का काम तो करता ही है, व्यक्ति को आलसी एवं परावलंबी बनाने का काम भी करता है। हालांकि अब मतदाता इतना जागरूक हो गया है कि वह वादों के खोखले वादों और वचन-पत्रों के आधार पर मतदान नहीं करता? वह जानता है कि चुनावी वादों का पुलिंदा जारी करना राजनीतिक दलों के लिए एक रस्म अदायगी भर है। दरअसल केंद्र सरकार हो अथवा राज्य सरकार ईमानदारी से रोजगार के अवसर पैदा करने के उपाय किए ही नहीं किए गए हैं। इस बहाने प्राकृतिक संपदा के दोहन का सिलसिला तेज करने की जरुर कोशिशें की जाती रही हैं। जबकि हकीकत है कि अंततः आधुनिक और औद्योगिक विकास का पूरा अर्जेडा कृषि और खनिज पर टिका है। परंतु विडंबना देखने में आ रही है कि खेती घाटे का सौदा हो गया है और किसान आत्महत्याएं कर रहे हैं। खेती किसानी से जुड़े 70 करोड़ लोगों में से 10 करोड़ लोग आजीविका का यदि वैकल्पिक साधन मिल जाए तो तुरंत खेती छोड़ने को तैयार खड़े हैं। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि किसान की माली हालत सुधारने की बात किसी भी दल के राजनीतिक अर्जेडे में गंभीर दिखाई नहीं दे रही है। अच्छा हो, उद्यमिता और कौशल विकास के नाम पर हमने जो ढांचा खड़ा किया है और बेवजह के प्रशिक्षण देने में लगे हैं, उस धन को छोटी जोत वाले किसानों को पेंशन के रुप में दिया जाए? इसी तरह शिक्षित बेरोजगारों की अपेक्षा पूर्ति के लिए नौकरी की उम्र घटाई जाए और सेवानिवृत्त कर्मचारियों की पेंशन में कटौती हो? आज सेवानिवृत्त प्राध्यापक और राजपत्रित अधिकारी को 80 हजार रुपए से भी ज्यादा पेंशन फिजूल में दी जा रही है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अब चुनाव नीतियों और कार्यक्रम की बजाय प्रलोभनों का फंडा उछालकर लड़े जाने लगे हैं। राजनेताओं की दानवीर कर्ण की यह भूमिका स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव की जड़ों

में मट्ठा घोलने का काम कर रही है। अपना उल्लू सीधा करने के लिए मतदाता को बरगलाना आदर्श चुनाव संहिता को ठेंगा दिखाने जैसा है। सही मायनों में वादों की घूस से निर्वाचन प्रयिा दूषित होती है,इसलिए इस घूसखोरी को आदर्श आचार संहिता के दायरे में लाना जरूरी है। वैसे भी इन वादों की हकीकत जमीन पर उतरी होती तो पंजाब में 7000 किसानों ने आत्महत्या न की होती? क्योंकि पंजाब में किसान कल्याण के सबसे ज्यादा वादे अकाली दल ने सरकार में रहते हुए किए थे। अफलातूनी वादों के उलट हकीकत में अब ज्यादा जरूरत शासन प्रशासन को भृष्टाचार मुक्त बनाने की है। यह वादा ज्यादातर राजनीतिक दलों के वादों में हमेशा गायब रहा है। दिल्ली में आम आदमी पार्टी जरूर भृष्टाचार मुक्त सरकार, बिजली दरें 50 फीसदी कम करने और हर परिवार को रोजाना 700 लीटर पानी मुहैया कराने के बुनियादी वादों के साथ चुनाव लड़ी और किसी हद तक सफल भी रही, लेकिन अब दिल्ली सरकार की अर्थव्यवस्था भी मुफ्त बिजली-पानी देने की वजह से डगमगा रही है।प्रियंका गांधी ने जो पांच गारंटी मध्यप्रदेश में दी हैं, कमोबेश यही कर्नाटक में दी गईं थीं। सत्तारूढ़ होने के बाद प्रति कनेक्शन सौ यूनिट बिजली मुफ्त दी तो दूसरे उपभोक्ताओं पर बिजली का यह बोझ डाल दिया। इस पहल को उचित नहीं कहा जा सकता है।

देश में मध्यप्रदेश के दिवंगत मुख्यमंत्री अर्जुन सिंह ने निर्धन परिवारों को मुफ्त में एक बत्ती कनेक्शन देने के वादे के साथ मुफ्तखोरी की शुरूआत आठवें दशक में की थी। तमिलनाडू की मुख्यमंत्री रहीं जयललिता ने तो चुनावी वादों का इतना बड़ा पिटारा खोल दिया था कि यह मामला सर्वोच्च न्यायालय तक पहुंच गया था। इस याचिका में अन्नाद्रमुक की चुनावी घोषणा पत्र को भृष्ट आचरण मानते हुए असंवैधानिक ठहराने की मांग की गयी थी, लेकिन न्यायालय ने याचिका खारिज कर दी थी। उस समय न्यायालय ने दलील दी थी कि घोषणा-पत्रों में दर्ज प्रलोभनों को भ्रष्ट आचरण नहीं माना जा सकता। चुनाव का नियमन जनप्रतिनिधित्व कानून के जरिए होता है और उसमें ऐसा कोई प्रावधान नहीं है, जिसके तहत इसे गैरकानूनी या भ्रष्ट कदाचरण ठहराया जा सके। न्यायालय ने लाचारगी प्रगट करते हुए कहा था कि इस तरह के मामलों में हस्तक्षेप करना उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आता। लिहाजा इस मसले पर विचार कर कारगर निर्णय लेने का कोई कदम विधायिका ही उठा सकती है। अलबत्ता अदालत ने निर्वाचन आयोग को जरुर निर्देश दिया था

कि वह चुनावी घोषणा-पत्रों को मर्यादित करने की दृष्टि से अतिवादी व लोक-लुभावन घोषणाओं को रेखांकित करे, जिससे आदर्श चुनाव संहिता का पालन हो सके।

अदालत की यह लाचारी लोक-लुभावन वादों के जरिए, वोट के लिए घुसखोरी बन गई

सेवानिवृत्त प्रधान न्यायाधीश एनबी रमणा, कृष्णमुरारी और हिमा कोहली की पीठ ने इस मुद्दे के समाधान के लिए केंद्र सरकार को उपाय सुझाने हेतु एक विषेशज्ञ पैनल गठित करने का भी निर्देश दिया था। यह न्यायालय भाजपा नेता एवं अधिवक्ता अश्विनी उपाध्याय की याचिका पर सुनवाई कर रही थी। उपाध्याय ने राजनीतिक दलों द्वारा मतदाताओं को लुभाने के लिए दिए जाने वाले उपहारों की घोषणाओं पर प्रतिबंध लगाने और ऐसे दलों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करने की मांग की थी। पीठ ने कहा था कि यह गंभीर मुद्दा है और चुनाव आयोग या सरकार यह नहीं कह सकते हैं कि वे इसमें कुछ नहीं कर सकते। केंद्र सरकार की ओर से पेश महाअधिवक्ता तुषार मेहता ने कहा था कि सैद्धांतिक रूप से याचिकाकर्ता की दलीलों का समर्थन करते हैं। इन लोक-लुभाव वादों के दो तरह के प्रभाव देखने में आते हैं। एक तो ये मतदाताओं के निष्पक्ष निर्णय को प्रभावित करते हैं और दूसरे, इन्हें पूरा करने के लिए अर्थव्यवस्था पर अतिरिक्त बोझ पड़ता है।

लेकिन इस परिप्रेक्ष्य में दुविधा है कि राजनीतिक दलों पर आयोग का अनुशासनात्मक नियंत्रण निर्वाचन की अधिसूचना जारी होने के बाद होता है, जबकि ज्यादातर वादे इस अधिसूचना के पहले जारी हो जाते हैं और कई वादे तो नेता चुनावी आमसभाओं में आचार संहिता का मखौल उड़ाते हुए भी कर डालते हैं। यहां तक कि अल्पसंख्यक मुस्लिम और सवर्ण ब्राह्मणों तक को आरक्षण देने का वादे किए गए हैं। तिस पर भी विडंवना है कि आदर्श निर्वाचन संहिता के तहत न तो कोई दंडात्मक कानून है और न ही इसकी संहिताओं में वैध-अवैध की अवधारणाएं परिभाषित हैं। आयोग यदि संहिता को लागू कर पाता है तो इसलिए कि राजनीतिक दल उसका सहयोग करते हैं और जनमत की भावना आयोग के पक्ष में होती है। तय है दल यदि आयोग के साथ असहयोग करने लग जाएं तो आयोग हाथ पर हाथ धरे बैठा रह जाएगा। वैसे भी आयोग की जवाबदेही स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने की है, न कि दलों के चुनावी मुद्दे तय करने की? इन विरोधाभासी हालातों से शीर्ष न्यायालय परिचित है, इसलिए न्यायालय ने कहा भी है कि, ऐसे मुद्दों पर विचार-विमर्श कर कानून बनाने का अधिकार विधायिका को ही है। यहां विडंबना है कि विधायिका और दल अंततः एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। प्रलोभन के जिन वादों के मार्फत मतदाता को बरगलाकर दल सत्ता के अधिकारी हुए हैं, उन वादों को घोषणा-पत्र में नहीं रखने का कानून बनाकर अपने ही हाथों से, अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारने की गलती क्यों करेंगे?

केन्द्र की सियासत में उत्तरप्रदेश में मजबूत होना जरूरी

समता पाठक

उत्तरप्रदेश देश की राजनीति में अहम जगह रखता है। खासकर लोकसभा के चुनाव में उप्र का अहम योगदान होता है। उप्र में लोकसभा की 80 सीटें हैं। कहा भी जाता है कि जिस भी पार्टी ने उप्र को फतह कर लिया केन्द्र में उसकी सरकार बनना लगभग तय है। पिछले इतिहास को हम देखें तो यही लगता है कि लोकसभा चुनाव के लिए उप्र में मजबूत होना बहुत जरूरी है। लेकिन जहां तक कांग्रेस पार्टी की बात की जाये तो यहां पर कांग्रेस अभी मजबूत स्थिति में नहीं है। वह चाहे विधानसभा चुनाव की बात हो या लोकसभा चुनाव की। दोनों की जगह पर कांग्रेस अभी संघर्ष करती नजर आ रही है। अगले वर्ष लोकसभा चुनाव होना हैं और राहुल गांधी मानहानि के एक केस में सजा सुनाये जाने के बाद चुनाव लड़ने के अयोग्य हो गए हैं। गौरतलब हो सजा सुनाए जाने से पूर्व तक राहुल गांधी को ही कांग्रेस की तरफ से प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार माना जाता था। सवाल यही है कि यूपी में गांधी परिवार नहीं तो कौन। उत्तर प्रदेश में कांग्रेस पार्टी उभर नहीं पा रही है सूत्रों की मानें तो कर्नाटक में जीत के बाद कांग्रेस की राष्ट्रीय महासचिव प्रियंका गांधी की भूमिका बदलेगी। वह चुनावी राज्यों में ज्यादा समय देंगी। बता दें कि इस साल के अंत तक राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में चुनाव होने वाले हैं। कांग्रेस की सरकार राजस्थान और छत्तीसगढ़ में है, जबकि बीजेपी की सरकार मध्यप्रदेश में है। हालांकि कर्नाटक में जीत के बाद अब कांग्रेस ने इन राज्यों में तैयारी तेज कर दी है, लेकिन कांग्रेस के लिए राजस्थान में हालात काफी खराब है। यहां कांग्रेस के लिए वापसी आसान नहीं होगी, इसीलिए कांग्रेस ने यहां कई लोकलुभावन घोषणाएं की हैं। 200 यूनिट बिजली तो उपभोक्ताओं को फ्री में मिलने भी लगी है। बहरहाल, बात प्रियंका के बाद उत्तर प्रदेश में कांग्रेस

की स्थिति की कि जाए तो यहां पार्टी के पास जनाधार वाले नेताओं का पूरी तरह से टोटा है। ज्यादातर नेता उम्रदराज हो चुके हैं, कांग्रेस ने नई पीढ़ी के नेताओं को कभी तवज्जो नहीं दी, जिसकी वजह से नई लीडरशिप भी तैयार नहीं हो पाई है। 80 लोकसभा सीटों वाली यूपी में यदि कांग्रेस का रिकार्ड अच्छा नहीं रहा तो उसके लिए अगले वर्ष केन्द्र में सत्ता की राह आसान नहीं होगी। दरअसल, प्रदेश कांग्रेस की अंतरकलह और बिखरा प्रबंधन उस पर फिर भारी पड़ा है। कभी-कभी सत्ताधारी दल भाजपा की नीतियों के विरोध को हथियार बनाकर कांग्रेस कुछ हमलावर तो दिखती है पर लोगों में विश्वास कायम नहीं कर पाती है।पदाधिकारियों की आपसी खींचतान इतनी बुरी तरह से हावी है कि कार्यकर्ता भी खेमेबंदी में उलझकर रह गए हैं। वोटों में उसकी भागीदारी भी घटती रही है। यह दशा लोकसभा चुनाव-2024 में उसके प्रदर्शन को लेकर चिंता की लकीरों को और बड़ा करती हैं। कांग्रेस के नए प्रदेश अध्यक्ष बृजलाल खाबरी ने आठ अक्टूबर, 2022 को पदभार संभाला था। उनके साथ ही पार्टी ने प्रदेश को छह प्रांतों में बांटकर पहली बार प्रांतीय अध्यक्ष के रूप में नया प्रयोग भी किया। जातीय समीकरणों के आधार पर अपने नेताओं को नई जिम्मेदारी सौंपी गई। नसीमुद्दीन सिद्दीकी को पश्चिमी प्रांत, नकुल दुबे को अवध, अनिल यादव को बृज, वीरेन्द्र चौधरी को पूर्वांचल, योगेश दीक्षित को बुंदेलखंड व अजय राय को प्रयाग प्रांत का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। इन सभी के लिए नगर

निकाय चुनाव पहली परीक्षा थी। दूसरे दलों के लिए लोकसभा चुनाव-2024 से पहले निकाय चुनाव भले ही सेमीफाइनल रहा हो पर कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष व प्रांतीय अध्यक्षों के लिए अपना दमखम दिखाने का पहला मौका था, जिसमें यह कोई करिश्मा नहीं कर सके। देश की सबसे पुरानी राजनीतिक पार्टी की उत्तर प्रदेश में दुर्दाशा की यह कहानी पुरानी है। 2022 के विधानसभा चुनाव में पार्टी के सभी 399 प्रत्याशियों को कुल मिलाकर 21,51,234 वोट मिले थे, जो कि कुल पड़े मतों का 2.33 प्रतिशत था। इससे पूर्व वर्ष 2017 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस ने 114 सीटों पर अपने उम्मीदवार उतारे थे, जिन्हें कुल 54,16,540 वोट मिले थे। कांग्रेस के हिस्से 6.25 प्रतिशत वोट आए थे।तब कांग्रेस गठबंधन के साथ चुनाव मैदान में थी और फिर 2022 में अकेले दम किस्मत आजमाई थी। वोटों के प्रतिशत का अंतर उसकी घटती ताकत को खुद बयां करता है।वहीं 2017 के निकाय चुनाव में कांग्रेस को 10 प्रतिशत मत मिले थे और वह भाजपा, सपा व बसपा से काफी पीछे रही थी। 2014 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को दो सीटें मिली थीं और पार्टी का वोट प्रतिशत 7.53 रहा था। 2019 लोकसभा में कांग्रेस के हाथ एक जीत ही लगी थी। यह भी साफ है कि हर चुनाव में कांग्रेस अपने खोए जनाधार को लौटाने की कोई कारगर जुगत लगाने में नाकाम रहती है,अब तो उसके पास को तुरूप का इक्का भी नही बचा है। सूत्रों की मानें तो आगामी चुनाव की तैयारियों को देखते हुए राज्य में कांग्रेस को जल्द ही नया प्रभारी मिल सकता है। पार्टी में प्रभारी के लिए नए नामों को लेकर मंथन भी शुरू हो गया है। सूत्रों के अनुसार कई नाम यूपी कांग्रेस प्रभारी की रेस में हैं। हरीश रावत और तारिक अनवर का नाम इस रेस में सबसे आगे बताया जा रहा है। इनको कांग्रेस का राज्य में प्रभार दिया जा सकता है। हालांकि अभी पार्टी जल्दबाजी में कोई फैसला नहीं लेना चाहती है। यूपी में कांग्रेस की नई कार्यकारिणी का भी एलान होना है, इसको लेकर भी कई नामों पर चर्चा चल रही है। माना जा रहा है कि प्रदेश कार्यकारिणी में क्षेत्रीय अध्यक्षों को जगह दी जा सकती है। राजनीतिक के जानकारों की मानें तो कर्नाटक चुनाव के बाद पार्टी में संगठन स्तर पर कुछ नेताओं की जिम्मेदारी को बढ़ाया जा सकता है। खास तौर पार्टी में राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में होने वाले विधानसभा चुनाव की तैयारी को देखते हुए ये बदलाव काफी अहम होगा।

2022 के विधानसभा चुनाव में पार्टी के सभी 399 प्रत्याशियों को कुल मिलाकर 21,51,234 वोट मिले थे, जो कि कुल पड़े मतों का 2.33 प्रतिशत था। इससे पूर्व वर्ष 2017 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस ने 114 सीटों पर अपने उम्मीदवार उतारे थे, जिन्हें कुल 54,16,540 वोट मिले थे। कांग्रेस के हिस्से 6.25 प्रतिशत वोट आए थे।तब कांग्रेस गठबंधन के साथ चुनाव मैदान में थी और फिर 2022 में अकेले दम किस्मत आजमाई थी। वोटों के प्रतिशत का अंतर उसकी घटती ताकत को खुद बयां करता है।वहीं 2017 के निकाय चुनाव में कांग्रेस को 10 प्रतिशत मत मिले थे और वह भाजपा, सपा व बसपा से काफी पीछे रही थी। 2014 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को दो सीटें मिली थीं और पार्टी का वोट प्रतिशत 7.53 रहा था।

क्या अशोक गहलोत और सचिन पायलट के बीच पिछले साढ़े चार से चला आ रहा सियासी संकट चुनाव के पहले खत्म होगा?

शैफाली वैभव

राजस्थान में कांग्रेस की परेशानी खत्म होने का नाम नहीं ले रही है। मुख्यमंत्री अशोक गहलोत और उप मुख्यमंत्री सचिन पायलट के बीच चल रहा सियासी वार चुनावी साल में भी बरकरार है। पार्टी हाईकमान के तमाम प्रयासों के बाद भी दोनों प्रमुख नेताओं के बीच सुलह नहीं हो पा रही है। वहीं राज्य की विपक्षी पार्टी बीजेपी इस मनमुटाव में फायदा लेने की पूरी कोशिश करने में लगी है। कयास तो यहां तक लगाए गए कि सचिन पायलट या तो नई पार्टी का गठन करेंगे या फिर बीजेपी में शामिल हो जायेंगे। हालांकि अभी तक ऐसा कुछ नहीं हुआ। लेकिन इतना तय माना जा रहा है कि आगामी विधानसभा चुनाव में इन दोनों नेताओं के बीच ऐसा ही मनमुटाव चलता रहा तो निश्चित रूप से राज्य में नुकसान कांग्रेस को ही होने वाला है। वैसे दिसंबर 2018 के चुनावों के बाद पायलट को मुख्यमंत्री पद का स्वाभाविक दावेदार माना जा रहा था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। गहलोत गांधी परिवार के विश्वास को अपने पक्ष में कैसे झुकाने में कामयाब रहे, इसके बारे में कई कहानियां हैं, जिनमें से किसी की भी पुष्टि नहीं की जा सकी है। लेकिन जब से गहलोत के डिप्टी के रूप में पायलट ने शपथ ली, उसके एक साल बाद तक, उन्होंने राय की राजनीति में खुद को कभी भी कम महत्वपूर्ण नहीं माना और अपने सार्वजनिक बयानों से सरकार को कटघरे में खड़ा किया। राजभवन में जब गहलोत के मंत्रिमंडल ने शपथ ली तो

परंपरा से हटकर मंच पर पायलट के लिए भी एक कुर्सी रखी गई। आमतौर पर केवल राज्यपाल और मुख्यमंत्री ही इस स्थान पर बैठते हैं। गहलोत और पायलट दोनों ने कई मौकों पर एक-दूसरे का नाम लिए बिना एक-दूसरे के खिलाफ टिप्पणियां की हैं। 2019 के लोकसभा चुनाव के बाद, सीएम ने कहा कि पायलट को हार की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। पार्टी सभी 25 सीटें हार गई। पायलट ने कहा कि अकेले जोधपुर में ज्यादा समय बिताने के बजाय यदि मुख्यमंत्री पूरे राज्य में प्रचार करते तो परिणाम कुछ और हो सकते थे। अन्य सभी अवसरों पर, जब गहलोत जोर देने के लिए कुछ कहते हैं कि राज्य के लोग और पार्टी के सभी विधायक उन्हें सीएम के रूप में देखना चाहते हैं, जैसे कि इसे रगड़ने के लिए, पायलट समान रूप से प्रतिकार करते हैं। पिछले लोकसभा चुनाव के प्रचार के लिए जयपुर के रामलीला मैदान में राहुल गांधी की रैली में फोटो-ऑप को कौन भूल सकता है जब्र पार्टी के तत्कालीन अध्यक्ष ने दोनों नेताओं को एक-दूसरे को गले लगाया था? हाल ही में, कोटा के एक सरकारी अस्पताल में 100 से अधिक शिशुओं की मृत्यु के बाद, पायलट ने अपनी ही सरकार को गिराने में कोई समय नहीं गंवाया, यह कहते हुए कि सरकार को संकट से निपटने में अधिक मानवीय होना चाहिए था, जाहिर तौर पर मुख्यमंत्री के उस बयान का जिक्र था जिसमें उन्होंने मौतों की बात कही थी होता है। चुनावी साल में कांग्रेस हाईकमान अशोक गहलोत और सचिन पायलट के बीचा रिश्ते सुधारने की आखिरी कवायद कर रही है। अगर दोनों गुटों में बात नहीं बनती है तो हाईकमान चुनाव से पहले बड़ा फैसला ले सकता है। पायलट-गहलोत का विवाद 30 महीना पुराना है और इसे सुलझाने में कांग्रेस के 02 महासचिवों की कुर्सी चली गई। वैसे देखा जाय तो राजस्थान कांग्रेस के विवाद में पायलट की दलीलें मजबूत हैं, जबकि अशोक गहलोत के पास संख्याबल है। गहलोत के पास मजबूत संख्याबल होने की वजह से हाईकमान भी स्वतंत्र फैसला नहीं कर पा रहा है। राहुल गांधी भी दोनों को पार्टी की संपत्ति बताकर विवाद से पल्ला झाड़ चुके हैं। पायलट गुट के करीबियों का कहना है कि कांग्रेस हाईकमान खासकर राहुल गांधी ने चुनावी साल में मुख्यमंत्री बनाने का वादा किया था, जिसे हाईकमान ने अब तक पूरा नहीं किया। पूरा करने के लिए कई प्रयास भी हुए, लेकिन बात नहीं बन पाई। 25 सितंबर 2022 को कांग्रेस हाईकमान ने वन लाइन रेयोलूशन पास कराने के लिए जयपुर में बैठक आयोजित की थी, लेकिन इस बैठक का गहलोत समर्थक 89 विधायकों ने बहिष्कार कर दिया। इस प्रकरण पर गहलोत ने माफी मांगी पर बागी नेताओं पर कार्रवाई नहीं हुई। सचिन पायलट गुट का कहना है कि वसुंधरा सरकार के जिस भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़कर सरकार में आए, उस पर अशोक गहलोत ने कोई कार्रवाई नहीं की। इससे जनता में कांग्रेस की छबि खराब हो रही है। कांग्रेस ने खनन घोटाला, कालीन चोरी जैसे कई आरोप वसुंधरा सरकार में लगाए थे। जुलाई 2020 में सचिन पायलट अपने साथ 20 विधायकों को लेकर

हरियाणा के मानेसर चले गए। उस वक्त गहलोत सरकार के गिरने की भविष्यवाणी की जा रही थी, लेकिन गहलोत ने मैनेजमेंट कर 102 विधायक जुगाड़ लिए। सरकार बनाने के लिए 101 विधायकों की ही जरूरत पड़ती है। सितंबर 2022 को कांग्रेस ने एक लाइन का प्रस्ताव पास कराने के लिए मल्लिकार्जुन खरगे और अजय माकन को ऑब्जर्वर बनाकर भेजा। यहां मीटिंग से पहले 89 विधायकों ने स्पीकर सीपी जोशी को इस्तीफा भेज दिया। कांग्रेस हाईकमान को बैठक रद्द करनी पड़ी। वैसे सुलह के 3 फार्मूले हैं, लेकिन तीनों में पेंच हैं। कांग्रेस हाईकमान के पास पहला फॉर्मूला सचिन पायलट को मुख्यमंत्री बनाने का है। राहुल गांधी के किए वादे को पूरा करते हुए पायलट को चुनावी साल में मुख्यमंत्री की कुर्सी देकर विवाद को शांत किया जा सकता है। हालांकि, सितंबर की घटना के बाद गहलोत से मुख्यमंत्री कुर्सी छिनना आसान नहीं है। गहलोत ने मुख्यमंत्री की कुर्सी को प्रतिष्ठा का सवाल बना लिया है और किसी सूरत में उसे छोड़ना नहीं चाहते हैं। चूंकि अधिकांश विधायक भी गहलोत के साथ खड़े हैं। ऐसे में हाईकमान मुख्यमंत्री पद पायलट को देने की बात कर राजस्थान में और किरकिरी नहीं करवाना चाहेगा। सचिन पायलट को साथ रखने के लिए हाईकमान के पास दूसरा बड़ा विकल्प पायलट के चेहरे को आगे कर चुनाव लड़ने का हो सकता है। ऐसे स्थिति में हाईकमान सचिन पायलट को यह कहकर साध सकता है कि आने वाला वक्त आपका है। हालांकि, इस ऑप्शन में भी कई पेंच हैं। अगर हाईकमान पायलट के नाम को आगे करती है, तो गहलोत के लिए राजनीतिक रास्ता बंद हो जाएगा। गहलोत ऐसी स्थिति कभी नहीं बनने देंगे। दूसरी तरफ पायलट गुट भी सरकार के एंटी इनकंबेंसी से डरा हुआ है। कांग्रेस हाईकमान के पास दूसरा ऑप्शन गहलोत

के चेहरे पर ही चुनाव लड़ने का है। हालांकि, इसकी संभावनाएं कम है। गहलोत के मुख्यमंत्री रहते पार्टी 2 बार चुनाव हार चुकी है। इसके अलावा गहलोत को अगर कांग्रेस आगे करती है तो गुर्जर समेत कई जातियों के वोट खिसक जाएंगे। 2018 के चुनाव में भाजपा की परंपरागत वोट बैंक माने जाने वाले गुर्जर समुदाय ने कांग्रेस के पक्ष में जमकर वोट किया था। राय में 30-40 सीटों पर गुर्जर समुदाय का प्रभाव है। सियासी गलियारों में इस बात की सबसे अधिक चर्चा है कि सचिन पायलट की डिमांड अगर पूरी नहीं हुई तो अलग पार्टी बना सकते हैं। हालांकि, पायलट जिस तरह की रणनीति अपना रहे हैं, उससे यह काम तुरंत होने की उम्मीद कम है। पायलट करीबियों के मुताबिक अभी अशोक गहलोत और वसुंधरा राजे के गठजोड़ का खुलासा किया जाएगा। इनमें रिसर्जेंट राजस्थान घोटाला, खनन घोटाला प्रमुख है। दोनों घोटाले को लेकर अशोक गहलोत ने भी वसुंधरा राजे पर निशाना साधा था। वहीं पायलट ने यह भी साफ कर दिया है कि वे कांग्रेस पार्टी नहीं छोड़ेंगे और पार्टी में रहकर ही लड़ाई लड़ेंगे। यानी पायलट का प्लान-बी तब शुरू होगा, जब हाईकमान कोई कार्रवाई करे। ऐसे में पायलट गुट को राजस्थान में भावनात्मक तौर पर फायदा मिल सकता है। राजस्थान को लेकर बड़ा सवाल यही है कि सचिन पायलट अगर अलग रास्ते पर जाते हैं, तो क्या होगा? कांग्रेस और भाजपा भी इसी गुणा-गणित में लगी हुई है। पायलट 2013 चुनाव में कांग्रेस को मिली करारी हार के बाद राजस्थान के अध्यक्ष बनाकर दिल्ली से भेजे गए थे। इसके बाद पायलट राजस्थान में ही हैं। अध्यक्ष रहते पायलट ने वसुंधरा के गढ़ पूर्वी राजस्थान में मजबूत पकड़ बना लिया। पूर्वी राजस्थान के 8 जिले दौसा, करौली, भरतपुर, टोंक, जयपुर, अलवर, सवाई माधोपुर और धौलपुर में विधानसभा की कुल 58 सीटें हैं। 2013 के चुनाव में भाजपा ने यहां शानदार परफॉर्मेंस करते हुए 44 सीटें जीती थी, लेकिन पायलट ने 2018 में सेंध लगाते हुए भाजपा को 11 पर समेट दिया। कांग्रेस को 2018 में पूर्वी राजस्थान में 44 सीटें मिली थी। पायलट समर्थक अधिकांश विधायक इसी क्षेत्र से आते हैं। पायलट के अलग पार्टी बनाने से इन 58 सीटों पर भाजपा वर्सेज पायलट के बीच मुकाबला हो सकता है। इसके अलावा अजमेर, नागौर और बाड़मेर की करीब 20 सीटों पर भी पायलट का दबदबा है।

कितनी सफल होगी नीतीश कुमार की विपक्षी एकता मुहिम?

2024 की चुनौतियों पर मंथन: विपक्ष का मिशन बंधन, क्या बन पाएगा महागठबंधन?

किशन भावनानी

वैश्विक स्तर पर पिछले करीब एक दशक से भारत की प्रतिष्ठा प्रतिभा वज़न और कद काफी अधिक बड़ा है इसमें कोई दो राय नहीं है ! क्योंकि इस पड़ाव में भारत ने रिकॉर्ड तोड़ विकास नए-नए आयामों की उपलब्धि की गाथाएं लिखी है, परंतु यह जो राजनीति है वह अच्छे अच्छों के पल्ले नहीं पड़ती, कुर्सी का मोह हर राजनेता को होता है। ऐसा माना जाता है कि उसके सामने सब कुछ छोटा हो जाता है, क्योंकि अभी भारत में 2024 का फाइनल और 2023 के अंत में राज्य चुनाव के रूप में सेमीफाइनल का आगाज़ हो रहा है। इसलिए बीते कुछ महीनों से हर राजनीतिक दलों में इंटर और आउटर दौर में मंथन चल रहा है। खूब मिलन गठबंधन हो रहे हैं जिसे हम दो भागों में चर्चा कर

सकते हैं। एक महागठबंधन करने करके हराना है, दूसरा 09 वर्षो का लेखा-जोखा बताना है। एक तरफ 2024 की चुनौतियों पर मंथन तो विपक्ष का मिशन बंधन जिसकी अभी तीसरी तारीख 23 जून 2023 फाइनल हुई है। जिस तरह रूलिंग पार्टी को 450 सीटों पर जोरदार टक्कर देने का फार्मूला महागठबंधन के लिए तैयार किया जा रहा है क्योंकि सत्ताधारी पार्टी को पिछले 2019 के चुनाव में केवल 37 प्रतिशत वोट ही मिला था। इसलिए अब 1977 के इतिहास को दोहराना कोई मुश्किल काम नहीं है जिसमें विपक्ष की जीत हुई थी और जनता पार्टी की सरकार बनी थी। परंतु आज एक रैली में पहलवान द्वारा बोला गया उसको भी याद रखना होगा जो रामायण और ग्रंथों में भी आया है, क्या होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढ़ावै साखा। क्योंकि फैसला जनता जनार्दन के हाथों में है। वह चाहे तो गठबंधन को महागठबंधन को ताज पहना सकती है या जमीदरोज़ भी कर

जिस तरह रूलिंग पार्टी को 450 सीटों पर जोरदार टक्कर देने का फार्मूला महागठबंधन के लिए तैयार किया जा रहा है क्योंकि सत्ताधारी पार्टी को पिछले 2019 के चुनाव में केवल 37 प्रतिशत वोट ही मिला था। इसलिए अब 1977 के इतिहास को दोहराना कोई मुश्किल काम नहीं है जिसमें विपक्ष की जीत हुई थी और जनता पार्टी की सरकार बनी थी। परंतु आज एक रैली में पहलवान द्वारा बोला गया उसको भी याद रखना होगा जो रामायण और ग्रंथों में भी आया है, क्या होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढ़ावै साखा।

क्या नीतीश कुमार सबको एक सूत्र में बांधने में कामयाब होंगे?

बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार भाजपा के खिलाफ विपक्षी दलों का एक मजबूत मोर्चा बनाने की कवायद में जुटे हुए हैं। इसके लिए नीतीश कुमार देश के विभिन्न क्षेत्रीय दलों के प्रमुखों से मिलकर उन सबको भाजपा के विरोध में एकजुट होने के लिए तैयार कर रहे हैं। नीतीश कुमार का प्रयास है कि मजबूत विकल्प के अभाव में पिछले नौ वर्षो से केंद्र में भाजपा की सरकार चला रहे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के समक्ष विरोधी दलों का एक मजबूत विकल्प प्रस्तुत किया जाए। ताकि अगले लोकसभा चुनाव में भाजपा को केंद्र की सत्ता से बाहर किया जा सके। नीतीश कुमार ने जब से बिहार में भाजपा से गठबंधन तोड़ा है। उसके बाद से उनका पूरा प्रयास है कि भाजपा के बढ़ते प्रभाव पर रोक लगाकर उनकी मनमानी को रोका जाए। नीतीश कुमार इस मुहिम में कांग्रेस को भी शामिल करना चाहते हैं। नीतीश कुमार का मानना है कि पहले सभी भाजपा विरोधी दल एक मंच पर आकर चुनाव में भाजपा को हरायें। उसके बाद प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार का चयन किया जाएगा। नीतीश कुमार अभी स्वयं को प्रधानमंत्री पद की दावेदारी से बाहर मान रहे हैं। उनका कहना है कि वह स्वयं प्रधानमंत्री नहीं बनना चाहते हैं। चुनाव के बाद बहुमत मिलने पर सभी विरोधी दलों के नेताओं की सहमति से प्रधानमंत्री का चयन किया जाएगा। नीतीश कुमार इस सिलसिले में बीजू जनता दल के अध्यक्ष व उड़ीसा के मुख्यमंत्री नवीन पटनायक, तृणमूल

सकती हैं क्योंकि कुछ महीनों से महागठबंधन और 9 वर्षो पर चर्चाएं बैठके हो रही हैं। इसलिए आज हम मीडिया में उपलब्ध जानकारी के सहयोग से इस आर्टिकल के माध्यम से चर्चा करेंगे। बात अगर हम महागठबंधन बनाम 9 वर्षो की

करें तो, विपक्ष की कई राजनीतिक दलों की महाबैठक होने वाली है। 2024 में होने वाले लोकसभा चुनाव को लेकर रणनीति बनाने के लिए देश के कई राजनीतिक दिग्गजों का वहां जमावड़ा लगेगा। ये बैठक पहले 19 मई और फिर 12 जून को

होने वाली थी, लेकिन सभी दलों के शीर्ष नेता के मौजूद नहीं होने के कारण इसे टाल दिया गया था। जनता दल युनाइटेड के राष्ट्रीय अध्यक्ष ने कहा है, कांग्रेस पार्टी से अध्यक्ष और युवा नेता ने इस बैठक में शामिल होने को लेकर सहमति जताई है।

कांग्रेस की अध्यक्ष व बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी, तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एमके स्टालिन, आम आदमी पार्टी के संयोजक व दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल, पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान, झारखण्ड मुक्ति मोर्चा के अध्यक्ष व मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन, भारत राष्ट समिति के अध्यक्ष व तेलंगाना के मुख्यमंत्री के चंद्रशेखर राव, महाराष्ट के पूर्व मुख्यमंत्री व शिवसेना उद्धव बालासाहेब ठाकरे के अध्यक्ष उद्धव ठाकरे, राष्टवादी कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष शरद पवार, समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष व पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव, राष्टीय लोकदल के अध्यक्ष जयंत ,चौधरी, माकपा के महासचिव सीताराम येचुरी, भाकपा के महासचिव डी राजा सहित कई अन्य क्षेत्रीय दलों के नेताओं से इस संबंध में मिलकर चर्चा कर चुके हैं। इसके अलावा कांग्रेस अध्यक्ष मलिकार्जुन खरगे, सोनिया गांधी, राहुल गांधी से भी नीतीश कुमार की विपक्षी एकता को लेकर विस्तृत चर्चा हो चुकी है। भाजपा विरोधी दलों में इस समय नीतीश कुमार ही ऐसे नेता हैं। जिनके सभी दलों के नेताओं से सौहार्दपूर्ण संबंध है तथा वह सभी से खुलकर बात कर सकते हैं। नीतीश कुमार की मुहिम में अधिकांश राजनीतिक दलों ने उनसे साथ देने का वादा भी किया है। बिहार में राष्ट्रीय जनता दल, हम सहित कई राजनीतिक दल पहले से ही नीतीश कुमार नीत गठबंधन सरकार में साथ हैं। हैदराबाद के सांसद असदुद्दीन ओवैसी, असम से सांसद बदरुद्दीन अजमल की पार्टी ने भी नीतीश की मुहिम में शामिल होने के लिए हां कर दी है। आम आदमी पार्टी की भी दिल्ली, पंजाब, गुजरात सहित हिंदी भाषी बेल्ट में भाजपा के साथ-साथ कांग्रेस से भी सीधा मुकाबला है। आम आदमी पार्टी ने कांग्रेस के वोट बैंक पर ही अपना आधार बनाया है। जहां-जहां कांग्रेस कमजोर हुई है। वहां-वहां आम आदमी पार्टी मजबूत हुई है। ऐसी स्थिति में कांग्रेस के नेता आम आदमी पार्टी के साथ गठबंधन में शायद ही शामिल हो। केंद्र सरकार द्वारा दिल्ली में सरकार व उपरायपाल के अधिकारों को लेकर सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिए गए फैसले के खिलाफ अध्यादेश जारी किया गया है। जिसके खिलाफ आम आदमी पार्टी राज्यसभा में सभी विपक्षी दलों से सहयोग मांग रही है। मगर आम आदमी पार्टी को राज्यसभा में सहयोग देने के मसले पर कांग्रेस के अंदर ही विरोध हो गया है। कांग्रेस महासचिव अजय माकन, पूर्व सांसद संदीप दीक्षित, पंजाब कांग्रेस विधायक दल के नेता प्रताप सिंह बाजवा सहित कई नेताओं ने आम आदमी पार्टी को कांग्रेस की दुश्मन नंबर एक बताते हुए उसे किसी भी तरह का समर्थन नहीं देने की बात कही है। अजय माकन ने तो कहा है कि आम आदमी पार्टी भाजपा से मिलकर कांग्रेस को कमजोर करने में लगी हुई है। ऐसे में उन्हें किसी भी तरह का समर्थन देना आत्मघाती कदम साबित होगा। पहले हिमाचल फिर कर्नाटक विधानसभा चुनाव में भाजपा की करारी हार के बाद भाजपा बैकफुट पर नजर आ रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के धुआंधार प्रचार व रोड शो के उपरांत भी दोनों ही प्रदेशों में भाजपा अपनी सरकार नहीं बचा सकी थी। इससे कांग्रेस सहित सभी विपक्षी दलों के हौसले बुलंद नजर आ रहे हैं। कांग्रेस का मानना है की राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, तेलंगाना, जम्मू-कश्मीर विधानसभा के आगामी चुनाव में यदि विपक्षी दल एकजुट होकर चुनाव लड़े तो भाजपा को आसानी से हराया जा सकता है। यदि इन प्रदेशों के विधानसभा चुनाव में भाजपा हार जाती है तो अगले लोकसभा चुनाव में उसका मनोबल काफी कमजोर हो जाएगा। वहीं इन प्रदेशों में जीतने से विपक्षी दलों की एकजुटता और अधिक मजबूत होगी। जिसका लाभ उन्हें आगामी लोकसभा चुनाव में मिल सकेगा। नीतीश कुमार द्वारा आगामी 12 जून को पटना में आयोजित विपक्षी दलों की बैठक अचानक ही स्थगित कर दी गई है। बैठक को स्थगित करने के कारणों का खुलासा नहीं किया गया है। बताया जा रहा है कि अगली तिथि कि घोषणा जल्द ही कर दी जाएगी। आगामी बैठक में जितने अधिक विपक्षी दलों के नेता शामिल होंगे उतनी ही विपक्ष की राजनीति मजबूत होगी। भाजपा को हराने के लिए विपक्षी दलों के नेताओं को आपसी हितों व टकराव को टाल कर एकजुटता से मुकाबला करने पर ही कामयाब हो पायेंगे।

इसके साथ ही टीएमसी प्रमुख और पश्चिम बंगाल की सीएम, समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष और उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री, झारखंड मुक्ति मोर्चा के प्रमुख और झारखंड के सीएम, शिवसेना अध्यक्ष और महाराष्ट्र के पूर्व मुख्यमंत्री, राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी प्रमुख, डीएमके अध्यक्ष और तमिलनाडु के सीएम, आम आदमी पार्टी के राष्ट्रीय संयोजक और दिल्ली के सीएम, सीपीआई के सचिव, सीपीएम, माले के सचिव ने भी मीटिंग में शामिल होने की सहमति दे दी है। विपक्षी एकता के लिए विभिन्न विपक्षी दलों का जमावड़ा बिहार सीएम की अगुवाई में 12 जून को पटना में होते होते रह गया। 12 जून को पटना में होने वाली बैठक के लिए सभी दलों की सहमति थी, पर युवक नेता का अमेरिकी दौरा और अध्यक्ष की ना नुकुर

ने विपक्षी एकता की बैठक को खतरे में डाल दिया था। अब बिहार सीएम एक बार नए सिरे से विपक्षी एकता की कोशिश कर रहे हैं। जिसमें वे सफल भी दिखाई दे रहे हैं। 2024 का लोकसभा चुनाव सिर पर है। ऐसे में अगर सभी विपक्षी दल एक होकर भाजपा और मोदी को टक्कर देंगे, तो भाजपा के लिए परेशानी हो सकती है। इसका इशारा आरएसएस ने भी किया है। वैसे विपक्षी एकता में लगातार चुनौतियां दिख रही हैं। क्षेत्रीय दल राष्ट्रीय दलों के साथ चुनाव लड़कर अपना अस्तित्व बचाने की फि में हैं। पश्चिम बंगाल की सीएम किसी दूसरे दल को पश्चिम बंगाल में घुसपैठ करने देने के बारे में आहुत सतर्क हैं। वह कांग्रेस, वामपंथी दलों के साथ सीटों का बंटवारा न करने का संकल्प ले चुकी हैं। सीएम, सीपीएम, सीपीआई, कांग्रेस के साथ पश्चिम बंगाल में कोई गठबंधन नहीं चाहती हैं। वह अकेले ही भाजपा से टक्कर लेना चाहती हैं। उनके अनुसार वह विपक्ष की नेता बनने की हर योग्यता रखती हैं। दिक्कत यह है कि विपक्ष का कोई बड़ा नेता उनके नाम पर सहमत नहीं है। सीएम को यह बात खलती है कि विपक्षी एकता की सब बात करते हैं, पर कोई उनके नाम पर मुहर नहीं लगा रहा है। विपक्षी एकता पर आशान्वित बिहार सीएम को विपक्षी दलों द्वारा बार-बार दिए जा रहे झटकों ने चिन्ता में डाल दिया है। आम चुनाव से पहले विपक्षी दलों को एक करने की कवायद जितनी तेजी से शुरू होती है, उसी स्पीड से हर कोशिश दरकती चली जाती है। विपक्षी एकता के रास्ते में अभी और अड़चनें

आएंगी। बिहार सीएम अपनी मुहिम में कामयाब होंगे, ऐसा उनका विश्वास है। विपक्षी एकता में सबसे बड़ी बाधा विभिन्न दलों के नेताओं का अहम है। सभी दल के लोग विपक्षी एकता से ज्यादा अपना-अपना भविष्य देख रहे हैं। कुछ दलों को गठबंधन करने पर अपना अस्तित्व ही संकट में लग रहा है। शुरू से ही ये दल एक दूसरे को नीचा दिखाते रहे हैं। गठबंधन करके लड़ने पर दल ही दलदल में न समा जाए, ऐसी चिंता छोटे दलों को खाए जा रही है। विपक्षी दलों के साथ सबसे बड़ी विडम्बना है कि यह दल एक दूसरे पर भरोसा नहीं कर रहे हैं। बिहार सीएम जिस उत्साह से विपक्ष को एकजुट करने को आगे आए हैं, वह कहीं से कम होती नहीं दिख रही है।

आज अगर हम सत्ता पक्ष पार्टी द्वारा महागठबंधन पर तंज कसने की करें तो, पहला, औरंगाबाद के बीजेपी सांसद ने विपक्ष पर तंज कंसते हुए कहा कि बिहार के महागठबंधन समेत देश के समूचे विपक्ष ने विधवा विलाप करने के लिए बड़ा अच्छा दिन चुना है। इनके पास और कोई एजेंडा तो है नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि जिसके पास 40 एमपी नहीं वह पीएम बनने का सपना देख रहा है। दूसरा, यह

बात अगर हम विपक्ष के महागठबंधन में सीटों के गणित की करें तो, लोकसभा की 450 सीटों पर बीजेपी को सीधे टक्कर देने की तैयारी है। इनमें महाराष्ट्र की 48, पश्चिम बंगाल 42, बिहार की 40, तमिलनाडु की 39, कर्नाटक की 28, राजस्थान की 25, गुजरात की 26 सीट भी शामिल हैं।

बात अलग है कि मुसलमान हितों के लिए चिंतित रहने वाले विपक्षी नेताओं ने बैठक की नई तारीख तय करते समय उनके (इस्लामी) नजरिए का भी ख्याल नहीं रखा। इस्लाम में 03, 13 और 23 अंक अशुभ माने जाते हैं। यानी इस्लामी नजरिए से 23 जून की बैठक शुभ नहीं हो सकती। इस्लाम में शादी-विवाह या कोई भी शुभ काम तीन तिथियों पर नहीं होते। कोई इस नई तारीख को लेकर भी सवाल खड़ा कर दे या बैठक में शामिल होने से इनकार कर दे तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

बात अगर हम विपक्ष के महागठबंधन में सीटों के गणित की करें तो, लोकसभा की 450 सीटों पर बीजेपी को सीधे टक्कर देने की तैयारी है। इनमें महाराष्ट्र की 48, पश्चिम बंगाल 42, बिहार की 40, तमिलनाडु की 39, कर्नाटक की 28, राजस्थान की 25, गुजरात की 26 सीट भी शामिल हैं। बिहार सीएम जिन पार्टियों को गठबंधन में शामिल करने की रणनीति पर काम कर रहे हैं। 2019 में उन सभी पार्टियों का वोट परसेंट करीब 45 फीसदी था। 2019 के चुनाव में 303 सीटें जीतने वाली बीजेपी का वोट परसेंट सिर्फ 37 फीसदी था। अगर बीजेपी वर्सेज एकजुट विपक्ष में सीधा मुकाबला हुआ और विपक्ष के पक्ष में वोट ट्रांसफर आसानी से हो गया तो बीजेपी की मुश्किलें बढ़ जाएगी। बात अगर हम सत्ता पक्ष के 09 वर्षो की उपलब्धियों को गिनाने की करें तो हर मंत्रालय द्वारा अपने-अपने स्तर पर बैठकों वेबीनारों सभाएं लेकर पिछले 09 वर्षो का विकास उपलब्धियों और सुशासन को गिना रहे हैं अब नतीजा जनता जनार्दन के हाथों से वक्त बताएगा।

भारत में स्वयं मिल सकता है

गुलाम कश्मीर

प्रमोद भार्गव

केंद्रीय रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने एक उम्मीद से भरा बयान दिया है। उन्होंने कहा कि गुलाम जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है, इस पर पाकिस्तान का कोई अधिकार नहीं है। यहां के लोग पाकिस्तान से तंग हैं, अतएव वे स्वयं ही ऐसा कुछ करेंगे कि भारत का हिस्सा बन जाए। किसी नेता ने ऐसा बयान शायद पहली बार दिया है कि गुलाम कश्मीर के लोग स्वयं ही भारत में विलय हो जाएं। संभव है भारत की यह ऐसी किसी रणनीति का हिस्सा हो, जिसकी निकट भविष्य में फलीभूत होने की संभावना हो? इसी का संकेत सिंह ने संकेत दिया हो। उन्होंने ये बात जम्मू-कश्मीर प्रदेश भाजपा की ओर से आयोजित सुशासन भी, सुरक्षा भी विषय पर बोलते हुए कही है। हालांकि इसमें कोई दो राय नहीं कि बंटवारे के समय के हस्ताक्षरित दस्तावेजों के अनुसार संपूर्ण पाक अधिकृत कश्मीर भारत का हिस्सा है। पाकिस्तान ने उस पर अवैध कब्जा किया हुआ है। इस विलय के संबंध में सर्वसम्मति से संसद में प्रस्ताव भी पारित होते रहे हैं। 1994 में पीवी नरसिंह राव की सरकार में भी इस बाबत एक प्रस्ताव

पारित हुआ था। चूंकि पीओके भारत का हिस्सा है। इसलिए जम्मू-कश्मीर विधानसभा में पीओके क्षेत्र की बनाई गईं चौबीस सीटें फिलहाल खाली रखनी पड़ती हैं। दरअसल भारत कश्मीर मुद्दे पर अब तक नाकाम इसलिए रहा, क्योंकि उसने आक्रामकता दिखाने की बजाय रक्षात्मक रवैया अपनाया हुआ था। इससे लाखों पंडितों को विस्थापन का दंश तो झेलना पड़ा ही यह पूरा इलाका आतंक व अलगाव की चपेट में भी आ गया। नतीजतन अब तक 42000 से भी ज्यादा लोगों को मौत के मुंह में जाना पड़ा।

विभाजन की जिस अव्यावहारिक व अप्राकृतिक मांग के आगे नेहरूसमेत हमारे तत्कालीन नेता नतमस्तक होते चले गए थे, उससे न केवल जम्मू-कश्मीर, बल्कि पीओके, भारत, पाकिस्तान और बंग्लादेश को भी विभाजन का दर्द झेलना पड़ा है। जबकि विभाजन के समय ही यह साफ लगने लगा था कि यह अखंड भारत की विरासत को खंडित करने की अंग्रेजी हुकूमत की कुटिल चाल है। बावजूद कांग्रेस नेता यह नहीं समझ पाए कि जो शेख अब्दुल्ला मुस्लिम कांफ्रेंस का गठन कर

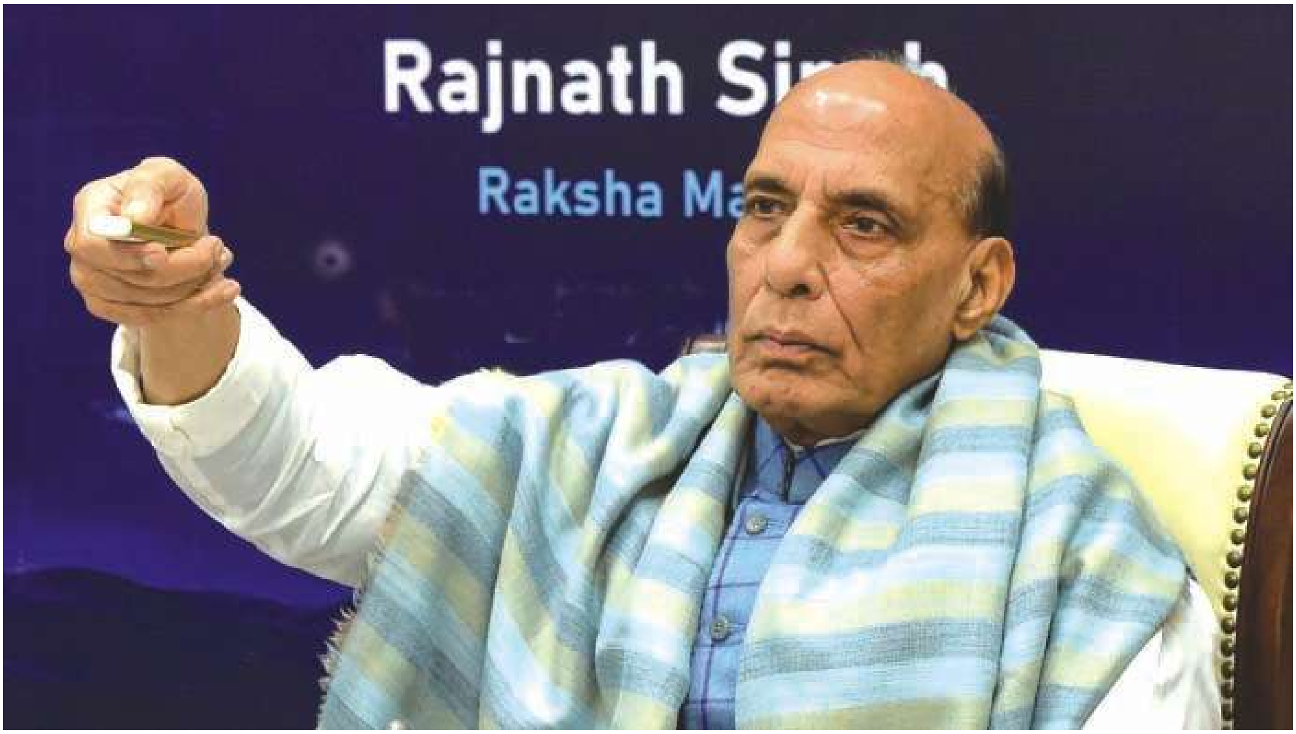

कश्मीर की सामंती सत्ता से मुठभेड़ कर रहा है, उसे शह मिलती रही तो वह भस्मासुर भी बन सकता है? 1931-32 में शेख की मुलाकात नेहरू तथा खान अब्दुल्ल गफ्फार खान से हुई। इन्हें सीमांत गांधी भी कहा जाता है। इस गुफ्तगू से शेख को इतनी ताकत और दृष्टि मिली कि शेख ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए मुस्लिम कांफ्रेंस से मुस्लिम शब्द हटा दिया और नेशनल जोड़ दिया। जिससे राष्ट्रीयता का भ्रम हो। इसी समय जिन्ना ने पृथकतावादी अभियान चला दिया। फिरंगी शासक तो चाहते भी यही थे कि भारत को आजादी धर्म के आधार पर बंटवारे की परिणति में मिले। आमतौर से ऐसा माना जाता है कि कश्मीर समस्या 1947 के बाद पनपी व विकसित हुई। जबकि वास्तव में इसकी शुरु आत जम्मू-कश्मीर के महाराजा गुलाब सिंह के दरबार में अंग्रेज रेजिमेंट की नियुक्तिके साथ ही हो गई थी। किंतु अंग्रेज नाकाम रहे। इसी समय दुर्भाग्य से कश्मीर के गिलगिट क्षेत्र के राजा रणवीर सिंह का देहांत हो गया। अंग्रेजों ने शोक में डूबे राज-परिवार की इस कमजोरी को एक अवसर माना और सक्रियता बढ़ा दी।

दरअसल अंग्रेजों ने 1885 में ही यह योजना बना ली थी कि किसी भी तरह जम्मू-कश्मीर के दुर्गम व सुरक्षित क्षेत्र गिलगिट व बाल्टिस्तान पर कब्जा करना है।

आमतौर से ऐसा माना जाता है कि कश्मीर समस्या 1947 के बाद पनपी व विकसित हुई। जबकि वास्तव में इसकी शुरु आत जम्मू-कश्मीर के महाराजा गुलाब सिंह के दरबार में अंग्रेज रेजिमेंट की नियुक्तिके साथ ही हो गई थी। किंतु अंग्रेज नाकाम रहे। इसी समय दुर्भाग्य से कश्मीर के गिलगिट क्षेत्र के राजा रणवीर सिंह का देहांत हो गया।

जिससे अमेरिका की सैन्य गतिविधियों के लिए एक सुरक्षित स्थान मिल सके। अमेरिका इसे सोवियत संघ पर शिकंजा कसने की दृष्टि से उपयुक्तक्षेत्र मान रहा था। लिहाजा अंग्रेजों ने षड्यंत्र पूर्वक इस क्षेत्र को गिलगिट एजेंसी नाम देकर 1889 में अपने कब्जे में ले लिया। इसके अधीनता में आते ही सिंधु नदी के पूर्व और रावी नदी के पश्चिमी तट तक समूचे पर्वतीय भू-भाग पर अंग्रेजों का नियंत्रण हो गया। इस समय गिलगिट में प्रताप सिंह, राजा रणवीर सिंह के उत्तराधिकारी के रूप में शासक थे। प्रतापसिंह अंग्रेजों की साजिश का शिकार हो गए। गुलाब सिंह की मृत्यु के बाद हरिसिंह जब राजा बने, तो 1925 में उनकी आंखें खुलीं और गिलगिट की साजिश को समझा। तब हरिसिंह ने हिम्मत व सख्ती से काम लेते हुए अपनी सेना गिलगिट भेजकर अंग्रेजी सेना को गिलगिट छोड़ने को विवश कर दिया और यूनियन जैक उतारकर कश्मीरी झंडा किले पर फहरा दिया। यह

अप्रत्याशित घटनाक्रम अंग्रेजों को एक शूल की तरह चुभता रहा।

1930 में जब स्वतंत्रता आंदोलन एक प्रखर राष्ट्रवाद के रूप में देशव्यापी हो गया तो इस राजनीतिक समस्या के हल के बहाने लंदन में गोलमेज सम्मेलन आहूत किया गया। भारतीय राजाओं के अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में हरिसिंह ने इसमें हिस्सा लिया। यहां हरिसिंह ने गिलगिट बाल्टिस्तान समेत, संपूर्ण जम्मू-कश्मीर को संघीय राज्य बना देने की पुरजोर पैरवी की। किंतु यह मांग अंग्रेजों की मंशा के अनुकूल नहीं थी, इसलिए सिरे से खारिज कर दी। यहां अंग्रेजों ने गिलगिट क्षेत्र से हरिसिंह द्वारा अंग्रेज सेना की बेदखली की गई थी, उसके प्रतिकार स्वरूप साजिश तो रची ही, औपनिवेशिक कूटनीति व भारत को विभाजित करने की मंशा को फलीभूत देखने के नजरिए से शेख अब्दुल्ला को महत्व देकर उसे कश्मीरी शासक के विरुद्ध उकसाना शुरू कर दिया। नतीजतन शेख ने अलगाववादी संगठन

1930 में जब स्वतंत्रता आंदोलन एक प्रखर राष्ट्रवाद के रूप में देशव्यापी हो गया तो इस राजनीतिक समस्या के हल के बहाने लंदन में गोलमेज सम्मेलन आहूत किया गया। भारतीय राजाओं के अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में हरिसिंह ने इसमें हिस्सा लिया। यहां हरिसिंह ने गिलगिट बाल्टिस्तान समेत, संपूर्ण जम्मू-कश्मीर को संघीय राज्य बना देने की पुरजोर पैरवी की।

मुस्लिम कांफ्रेंस की नींव डाल दी। इसी दौरान शेख की मुलाकात नेहरू से हुई, जो मित्रता में बदल गई। 1932 से ही शेख ने कश्मीर पर नाजायज कब्जे के लिए जंग छेड़ दी।

इसके बाद से लेकर 1947 तक के कालखंड में 1942 की अगस्त क्रांति तथा आजाद हिंद फौज के अभियान और दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद जब फिरंगी हुकूमत के खिलाफ जबरदस्त असंतोष और सशस्त्र संघर्ष की घटनाएं आम हो गईं तो अंग्रेजों ने अनुभव किया कि अब भारत पर नियंत्रण संभव नहीं है, तब उन्होंने भारतीय रियासतों के विलीनीकरण के लिए धार्मिक व क्षेत्रीय उपराष्ट्रीयताओं को भी उकसाना शुरू कर दिया। फलतः शेख समेत अनेक हिंदू व मुस्लिम नरेशों में एक नए स्वतंत्र देश पर राज करने की मनोकमना अंगड़ाई लेने लगी। जबकि रियासतों का विलय भारतीय राष्ट्र को अखंड भारत का रूप देकर एक सशक्त व एकीकृत संविधान द्वारा संचालित राजनीतिक ईकाई का निर्माण करना था। इसी समय शेख ने स्वतंत्र कश्मीर का सुल्तान बनने का सपना देखना शुरू कर दिया। मुस्लिम लीग तो जिन्ना के नेतृत्व में पहले से ही मुसलमानों के लिए पृथक मुस्लिम देश बनाने की मांग कर रही थी।

1946 में शेख ने हरिसिंह के विरुद्ध महाराजा कश्मीर छोड़ों आंदोलन छेड़ दिया।

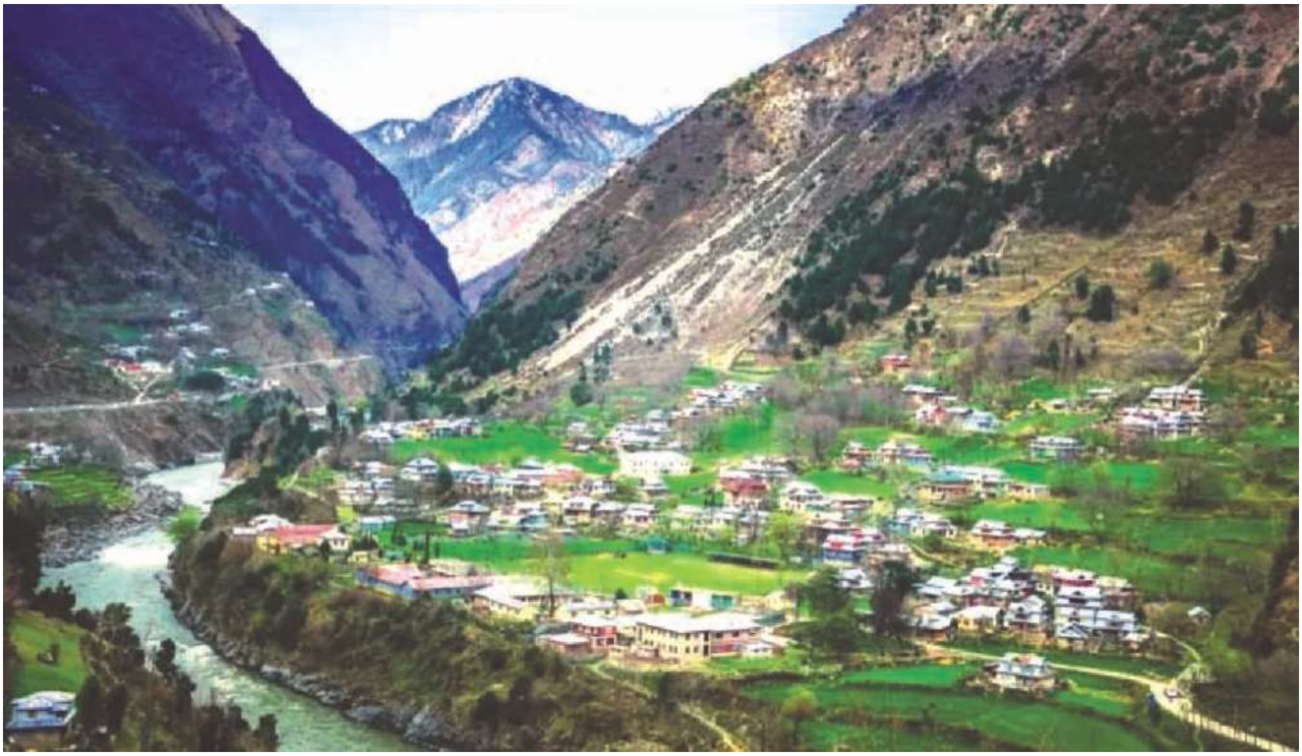

20 मई 1946 को शेख ने श्रीनगर की मस्जिदों का दुरुपयोग करते हुए सांप्रदायिक उन्माद फैलाने के ऐलान कराए। नतीजतन शेख की गिरफ्तारी हुई और उन्हें तीन साल की सजा सुनाई गई। इस गिरफ्तारी के बाद कश्मीर की स्थिति पूरी तरह नियंत्रण में थी। किंतु यह गिरफ्तारी नेहरू को रास नहीं आई। नेहरू ने शेख की गिरफ्तारी को गलत ठहराते हुए दिल्ली के राजनीतिक हलकों में हरिसिंह को दोषी ठहराना शुरूकर दिया। नेहरू शेख को छुड़ाने के लिए इतने उतावले हो गए कि जब देश स्वतंत्रता संग्राम की निर्णायक लड़ाई लड़ रहा था, तब 19 जून 1946 को नेशनल ऐयरवेज के हवाई जहाज से लाहौर होकर रावलपिंडी पहुंचे और फिर रावलपिंडी से जीप द्वारा श्रीनगर पहुंच गए। यहां के कश्मीरी पंडितों ने नेहरू को समझाइश दी कि आपको गुमराह किया जा रहा है, महाराजा अपनी जगह सही हैं। किंतु नेहरू को ये शब्द कानों में पिघले शीशे की तरह लगे। हरिसिंह ने नेहरू का कहना नहीं माना तो सत्याग्रह की घोषणा कर दी। मित्रता के भुलावे में नेहरू द्वारा की गई यह भूल और शेख को छुड़ाने की जिद्द व जुनून कालांतर में ऐतिहासिक भूल साबित हुए। हरिसिंह ने कठोरता बरतते हुए नेहरू के हठ को सर्वथा नकार दिया और उन्हें हिरासत में लेकर कश्मीर की सीमा से बाहर का रास्ता दिखाकर रिहा कर दिया।

नेहरू ने इस आचरण को नितांत अव्यावहारिक माना और हरिसिंह से बदला लेने का संकल्प ले लिया। इसलिए देश की 562 रियासतों को विलय करने का जो दायित्व पटेल बड़ी चतुराई से संभाल रहे थे, उसमें एक जम्मू-कश्मीर का दायित्व नेहरू ने जबरदस्ती अपने हाथ ले लिया। इसी कालखंड में 24 अगस्त 1946 को नेहरू के नेतृत्व में अंतरिम सरकार बना दी गई। यह वह दौर था, जब पूरे भारत में सांप्रदायिक दंगों के साथ अनिश्चय, अविश्वास एवं अराजक वातावरण छाया हुआ था। इसी

> ***देश की 562 रियासतों को विलय करने का जो दायित्व पटेल बड़ी चतुराई से संभाल रहे थे, उसमें एक जम्मू-कश्मीर का दायित्व नेहरू ने जबरदस्ती अपने हाथ ले लिया। इसी कालखंड में 24 अगस्त 1946 को नेहरू के नेतृत्व में अंतरिम सरकार बना दी गई। यह वह दौर था, जब पूरे भारत में सांप्रदायिक दंगों के साथ अनिश्चय, अविश्वास एवं अराजक वातावरण छाया हुआ था। इसी समय 20 फरवरी 1947 को ब्रिटेन के प्रधानमंत्री क्लीमेंट एटली ने ऐतिहासिक घोषणा की, कि जून 1948 तक भारत को स्वतंत्र कर दिया जाएगा। इस घोषणा के परिणाम की जिम्मेबारी एडमिरल लुईस माउंटबेटन को सौंपी गई।***

समय 20 फरवरी 1947 को ब्रिटेन के प्रधानमंत्री क्लीमेंट एटली ने ऐतिहासिक घोषणा की, कि जून 1948 तक भारत को स्वतंत्र कर दिया जाएगा। इस घोषणा के परिणाम की जिम्मेबारी एडमिरल लुईस माउंटबेटन को सौंपी गई। 24 मार्च 1947 को वायसराय के रूप में माउंटबेटन ने भारत के प्रशासनिक दायित्व अपने हाथ में ले लिए। माउंटबेटन ने अलग-अलग गोपनीय मुलाकतें व कांग्रेसी नेताओं से करके भारत विभाजन का संकल्प गांधी के विरोध के बावजूद ले लिया। अंततोगत्वा 4 जुलाई 1947 को ब्रिटेन की संसद के दोनों सदनों में भारतीय स्वतंत्रता विधेयक-1947 पेश कर दिया, जो मत-विभाजन से पारित हो गया। 18 जुलाई 1947 को ब्रिटिश हुकूमत ने अनुमोदन भी कर दिया। इसी विधेयक के तहत भारत को धर्म के आधार पर दो स्वतंत्र औपनिवेशिक राज्यों में बांट दिया गया।

जम्मू-कश्मीर रियासत का विलय नेहरू के हाथ में होने के कारण असमंजस में रहा। डोगरा राजा हरिसिंह जहां कश्मीर की स्वतंत्र राज्य की परिकल्पना कर रहे थे, वहीं उनके प्रधानमंत्री रामचंद्र काक पाकिस्तान के साथ विलय पर विचार कर रहे थे, क्योंकि उनकी पत्नी यूरोपियन थीं, इसलिए उनकी आंखें मुंद गईं थीं। इसी अनिश्चितता के दौर में 22 अक्टूबर 1947 को शेख की शह पर पाक फौज जीपों व ट्रकों पर सवार होकर कश्मीर में चढ़ी चली आई। इस संकट से मुक्ति के लिए हरिसिंह विवश हुए और उन्होंने 26 अक्टूबर 1947 को विलय-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। इसके बाद 27 अक्टूबर 1947 को कबिलाइयों को बेदखल करने के लिए हवाईजहाज से सेना भेज दी गई। भारतीय सैनिकों ने कबिलाईयों को खदेड़ दिया, किंतु दुर्गम क्षेत्र होने के कारण मुजफ्फराबाद का पीओके, गिलगिट व बाल्टिस्तान क्षेत्र पाक के कब्जे में बना रहा। इस परिप्रेक्ष्य में नेहरू जल्दबाजी में संयुक्त राष्ट्र संघ चले गए। संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् ने इसे विवादित क्षेत्र घोषित कर दिया। परिणामस्वरूप युद्धविराम तो हो गया, लेकिन कश्मीर की शासन व्यवस्था को लेकर नेहरू, हरिसिंह और शेख के बीच दिल्ली समझौता हुआ। इस समझौते के आधार पर ही नेहरूने शेख के सुपुर्द जम्मू-कश्मीर की कमान सौंप दी। इसके बाद कश्मीर को विशेष दर्जा देने के लिए 370 का अनुच्छेद पटेल और अंबेडकर के विरोध के बावजूद जोड़ दिए गए। हालांकि अब इस अनुच्छेद को हटा दिया गया है। लिहाजा अब अवसर है कि गुलाम कश्मीर माने जाने वाले पीओके, गिलगिट व बाल्टिस्तान को पाक के शिकंजे से मुक्त करके भारत में विलय कर लिया जाए।

गांधी दुनिया से कभी खत्म नहीं हो पाएंगे

श्रवण गर्ग

राष्ट्रपिता की एक बार फिर हत्या की जा रही है। पहले उनके शरीर का नाश किया गया। फिर उनके आश्रमों और उनकी स्मृतियों से जुड़े प्रतीकों पर हमला किया गया। अब उन्हें मुगलों के साथ साथ अब उन्हें मुगलों के साथ-साथ इतिहास और पाठ्यपुस्तकों से या तो बाहर किया जा रहा है फिर उनकी हत्या और उनके हत्यारों से जुड़े संदर्भों को सत्ता की जरूरतों के मुताबिक संशोधित किया जा रहा है। मानकर चला जा रहा है कि ऐसा निर्विरोध कर दिया जाने के बाद गांधी की समाज से वैचारिक आध्यात्मिक और नैतिक उपस्थिति पूरी तरह खत्म कर दी जाएगी। संप्रदायिक हिंसा के साम्राज्य के प्रति धार्मिक स्वीकृति प्राप्त करने के लिए सर्व धर्म समभाव की बात करने वाले गांधी को उसके प्रत्येक अवतार में समाप्त किया जाना संघ की सत्ता के लिए आवश्यक हो गया है। बहस का विषय अब यही बचा है कि उक्त उपक्रम विद्यार्थियों का भार कम करने के लिए किया जा रहा है या फिर अपने अपराध बोधों की सूचियों से पाठ्यक्रमों को बाहर ही करने के लिए किया जा रहा है?

किसी से छुपा नहीं रह गया है कि गांधी को मारने का काम उनकी स्थान पर सावरकर की प्राण प्रतिष्ठा करने के लिए हो रहा है। निश्चित ही गांधी और सावरकर एक साथ नहीं रह सकते। धर्म विशेष की सत्ता की स्थापना में एक के लिए दूसरे को हटाया जाना जरूरी है। इस काम को संपन्न करने के लिए 30 जनवरी 1984 और 26 मई 2014 की अवधि के बीच कल्पना की जा सकती है। दोनों ही तारीख दोनों ही तारीखों का भारत की आत्मा के साथ गहरा संबंध स्थापित हो गया है। इतिहास के विद्यार्थी भारत के दूसरे विभाजन की तारीख अब ज्यादा आसानी से तलाश सकते हैं।

खादीधारी गांधीवादी और अपने को बापू का अनुयाई भी और अपने को बापू का

अनुयायी मानने का दंभ भरने वाले कांग्रेसी भी मुखरता के साथ सवाल करने से कतरा रहे हैं कि गांधी के घर में ही बैठकर इतनी हिम्मत के साथ उस व्यक्तिकी प्राण प्रतिष्ठा करने का दुस्साहस कैसे किया जा सकता। जिस पर राष्ट्रपति की हत्या के बाद विशेष अदालत में मुकदमा चलाया गया था। अदालत द्वारा निर्दोष साबित कर दिए जाने के बाद नवंबर 1966 में गठित एक सदस्यीय कपूर आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा था गांधी की हत्या का षड्यंत्र सावरकर और उनके अनुयायियों ने रचा था। इसी निष्कर्ष पर आना पड़ा पड़ता है। सावरकर का तक तक निधन हो चुका था।

गांधी का विचार और उनकी जरूरत व वर्तमान की विभाजनकारी राजनीति के लिए चरखे से काते गए सूत के बजाय मशीनों से बुने गए पलिस्टर की ऐसी नकाब हो गई है जिसके पीछे उनकी सहिष्णुता, अहिंसा और लोकतंत्र का मजाक उड़ाने वाले गुरूर और हिंसक चेहरे छुपे हुए हैं। ये चेहरे गांधी विचार की जरा सी आहट को भी किसी महामारी की दस्तक की तरह देखते हैं और अपने अनुयायियों को उसके हिंसक विरोध के लिए तैयार करने में जुट जाते हैं।

ऱक्षिणपंथी बहुसंख्यकवाद को हथियारों से सज्जित करने की शर्त यही है कि गांधी द्वारा प्रतिपादित धार्मिक सहिष्णुता की हत्या करके अल्पसंख्यक विरोधी धार्मिक उन्माद में बदल दिया जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए गांधी को वैचारिक रूप से खत्म किया जाना जरूरी है। हिंदुत्व के कट्टरपंथी समर्थकों के लिए वह एक दुर्भाग्यपूर्ण क्षण रहा होगा कि गांधी को उनके शरीर के साथ ही विचार रूप में राजघाट पर नहीं जलाया जा सका। इन समर्थकों का मानना हो सकता है कि इतिहास के साथ छेड़छाड़ और पाठ्यपुस्तकों के जरूरी फेरबदल के जरिए उस अधूरे रहे काम को पूरा करने का वर्तमान से ज्यादा उपयुक्तअवसर आगे नहीं आ सकेगा।

एक डरे हुए राष्ट्र की मानसिकता के कारण हम इस बात को स्वीकार करने में संकोच कर रहे हैं कि विचार रूप में गांधी हमें कोई जरूरत नहीं बची है। गांधी की एक व्यक्तिऔर विचार के रूप में तभी तक जरूरत थी जब तक कि राष्ट्र की महत्वाकांक्षाएं अहिंसक थी। जैसे-जैसे नागरिकों के पास हिंसक विचारों और मारक हथियारों का जखीरा बढ़ता गया, उजागर होने लगा कि सत्ता गांधी की उपस्थिति का इस्तेमाल हिंसा के लिए हथियारों की गरीबी और औद्योगिक पिछड़ेपन के कारण ही कर रही थी। अब सत्ता की नजरों में गांधी और दारिद्र दारुण्य और दया का प्रतीक बन कर रह गए हैं। उसके लिए 05 ट्रिलियन की की इकोनॉमी में प्रवेश करने वाले राष्ट्र को इस तरह के प्रतीकों के साथ नहीं रखा जा सकता।

दक्षिण अफ्रीका की 07 जून 1893 की घटना की तरह अगर आज की तारीख में कोई सवर्ण किसी मोहनदास करमचंद गांधी को ट्रेन से उतारकर प्लेटफार्म पर पटक दे तो कितने लोग उसकी मदद के लिए आगे आने की हिम्मत करेंगे, दावे के साथ नहीं कहा जा सकता। विदेशों में बसने वाले भारतीय एशियाई मूल के नागरिक आए दिन अपने उपर होने वाली नस्लीय हमले चुपचाप सहते रहते हैं। इनमें लूट और हत्याएं भी शामिल होती हैं। इन हमलों के खिलाफ कहीं कोई छटपटाहट नहीं नजर आती।

गांधी की प्रतिमाओं के साथ विदेशों में होने वाले अपमान की घटनाओं के प्रति तो सरकार विरोध व्यक्त करती है पर जब अपने ही देश के किसी शहर में गोडसे की मूर्ति बिना किसी विरोध के स्थापित हो जाती है या कहीं और राष्ट्रपिता के पुतले पर सार्वजनिक रूप से गोलियां दागकर 30 जनवरी 1984 की घटना का गर्व के साथ मंचन किया जाता है तो कोई पीड़ा नहीं होती।

सवाल ये है कि क्या देश के शहरों और सड़कों के नाम बदल देने, इतिहास के पन्नों से मुगल शासकों को हटा देने और कुछ करोड़ पाठ्यपुस्तकों में राष्ट्रपिता की हत्या से जुड़े वास्तविक संदर्भों के स्थान पर संशोधित पाठ जोड़ देने से महात्मा गांधी का नाम दुनिया के दूसरे मुल्कों से भी मिट जाएगा? भाजपा और संघ को चाहे जरूरत नहीं हो, दुनिया का काम गांधी के बिना कभी भी नहीं चल सकेगा। गांधी सिर्फ उसी दिन खत्म होंगे जिस दिन इंग्लैंड में सावरकर को भारत के स्वतंत्रता संग्राम का योद्धा माना जाने लगेगा और वाशिंगटन में गोडसे की प्रतिमा की स्थापना हो जाएगी।

डेढ़ दशक में जन-सहयोग से विकसित राज्य के रूप में उभरा मध्यप्रदेश

देश के हृदय स्थल मध्यप्रदेश ने पिछले डेढ़ दशक में विकास के नये आयाम स्थापित कर विकसित राज्य की पहचान बना ली है। मध्यप्रदेश की सुशासन और विकास रिपोर्ट-2022 के अनुसार राज्य में आए बदलाव से मध्यप्रदेश बीमारू से विकसित प्रदेशों की पंक्ति में उदाहरण बन कर खड़ा हुआ है। इस महती उपलब्धि में प्रदेश में जन-भागीदारी से विकास के माडल ने अहम भूमिका निभाई है। मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान के कुशल नेतृत्व में केन्द्र और राज्य की डबल इंजन सरकार ने मध्यप्रदेश को अन्य राज्यों के लिये अनुकरणीय बना दिया है। इस अरसे में सड़क, बिजली, पानी, कृषि, पर्यटन, जल-संवर्धन, सिंचाई, निवेश, स्व-रोजगार और अधो-संरचना विकास के साथ उन सभी पहलुओं पर सुविचारित एवं सर्वांगीण विकास की नवीन गाथा लिखी गई जो जन-कल्याण के साथ विकास के लिये जरूरी हैं।

बेहतर वित्तीय प्रबंधन और चौतरफा विकास से आज प्रदेश की विकास दर 19.7 प्रतिशत है, जो देश में सर्वाधिक है। देश की अर्थ-व्यवस्था में मध्यप्रदेश 4.6 प्रतिशत का योगदान दे रहा है। सकल घरेलू उत्पाद में बीते दशक में 200 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। मध्यप्रदेश की आर्थिक वृद्धि दर निरंतर बाढ़ रही है। वर्ष 2001-02 में 4.43 प्रतिशत की दर आज बाढ़ कर 16.43 प्रतिशत हो गई है प्रदेश का सकल घरेलू उत्पाद 71 हजार 594 करोड़ रूपये से बाढ़ कर 13 लाख 22 हजार 821 रूपये हो गया है। वर्ष 2001-02 में प्रति व्यक्ति आय 11 हजार 718 रूपये थी, जो वर्ष 2022-23 में बाढ़ कर एक लाख 40 हजार 583 रूपये हो गई है। राज्य की जीएसडीपी की वृद्धि दर विगत एक दशक में राष्ट्रीय जीडीपी वृद्धि दर से अधिक रही है।

विकास प्रक्रिया में अधो-संरचना के

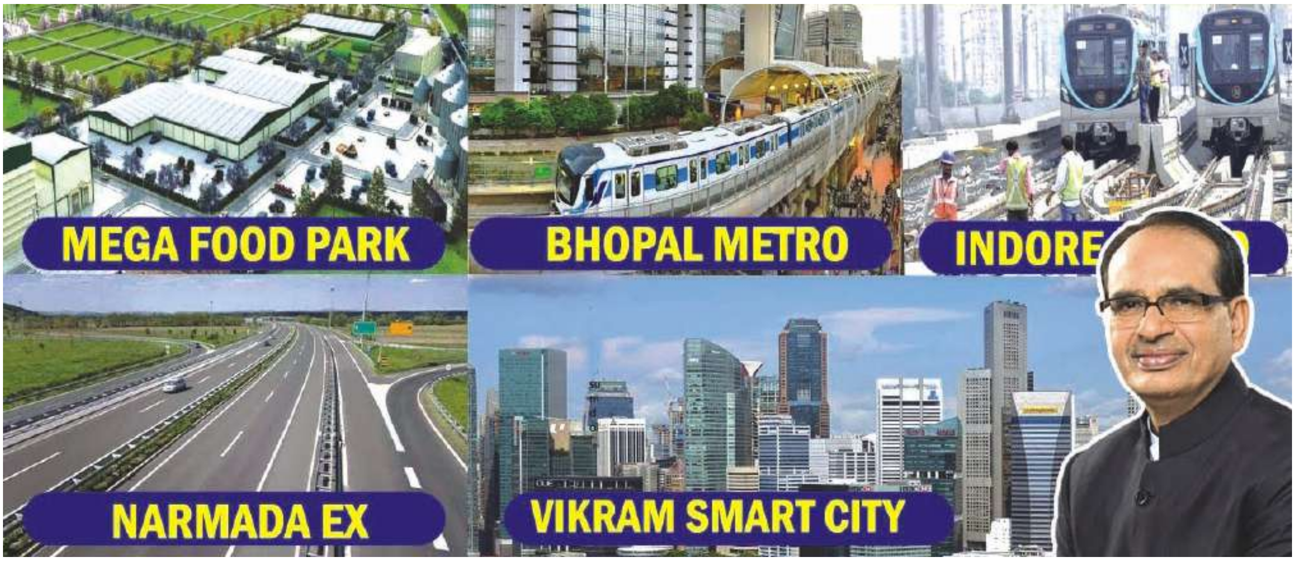

महत्व के मद्देनजर मध्यप्रदेश में निरंतर अधो-संरचना विकास हो रहा है। अधो-संरचना बजट जो वर्ष 2002-03 में 3873 करोड़ रूपए था, वह वर्ष 2023-24 में बाढ़ कर 56 हजार 256 करोड़ रुपए हो गया है। एक समय था जब बिजली आती कम थी और जाती ज्यादा थी। आज प्रदेश बिजली क्षेत्र में आत्म-निर्भर है और 24 घंटे बिजली की उपलब्धता है। वर्ष 2003 में उर्जा क्षमता 5173 मेगावाट थी, जो बाढ़ कर 28 हजार मेगावाट हो गई है।

नवीकरणीय उर्जा के क्षेत्र में भी मध्यप्रदेश अग्रणी है। ओंकारेश्वर में लगभग 3500 करोड़ के निवेश से 600 मेगावाट का फ्लोटिंग सोलर सोलर पॉवर प्लांट का कार्य प्रारंभ हो गया है। किसानों के खेतों में 50 हजार सोलर पंपों की स्थापना का लक्ष्य है। विश्वधरोहर साँची आहुत जल्द सोलर सिटी के रूप में विकसित होकर देश में अपनी अलग पहचान प्रानायेगा।

अच्छी सड़कें विकास की धुरी होती है। एक समय था, तब यह पता ही नहीं चलता था कि सड़क में गड्ढे हैं या गड्ढे में सड़क है। अब गाँव-गाँव, शहर-शहर अच्छी गुणवत्तायुक्त सड़कों का जाल बिछाया गया हैं। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में वर्ष 2001-02 में 44 हजार किलोमीटर सड़कें थी, अब 4 लाख 10 हजार किलोमीटर सड़कें बन गई हैं। राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजना में लगभग 1500 किलोमीटर लंबाई के 40 हजार करोड़ की लागत के 35 कार्य स्वीकृत हैं। अटल, नर्मदा और विंध्य प्रगति पथ के साथ मालवा, बुंदेलखंड और मध्य विकास पथ निर्मित किए जा रहे हैं।

प्रदेश में सभी रेलवे क्रॉसिंग समाप्त करने के लिए 105 रेलवे ओवर ब्रिज के साथ 334 पुलों का निर्माण हो रहा है। साथ ही 86 हजार करोड़ से अधिक की रेल परियोजनाओं के कार्य चल रहे हैं। वर्ष 2009 से 2014 के बीच जहाँ प्रदेश को औसतन 632 करोड़ रूपए का रेलवे बजट मिलता था, वहीं वर्ष 2022-23 में 13 हजार 607 करोड़ का रेलवे बजट प्रावधान मिला है, जो इक्कीस गुना अधिक है। अमृत भारत रेलवे स्टेशन योजना में प्रदेश के 80 रेलवे स्टेशन विश्वस्तरीय बनाए जाएंगे। अत्याधुनिक रानी कमलापति स्टेशन देश में एक मॉडल बना है। एक वंदे भारत ट्रेन प्रारंभ हो चुकी है और आज प्रधानमंत्री श्री मोदी मध्यप्रदेश को 2 और वंदे भारत ट्रेन

की सौगात देने वाले हैं। प्रदेश में हवाई सेवाओं का विस्तार भी निरंतर हो रहा है।

प्रदेश में कृषि को लाभ का धंधा बनाना के लिए सिंचाई क्षमताओं का निरंतर विकास किया जा रहा है। वर्ष 2003 में सिंचाई क्षमता केवल 7 लाख 68 हजार हेक्टेयर थी, जो वर्ष 2022 में बढ़ कर 45 लाख हेक्टेयर से अधिक हो गई है। वर्ष 2025 तक सिंचाई क्षमता को बाढ़ा कर 65 लाख हेक्टेयर किये जाने पर भी तेजी से काम किया जा रहा है। हर घर जल से नल योजना पर तेज गति से कार्य हो रहा है, अभी तक लगभग 50 प्रतिशत घरों तक नल से जल पहुँच चुका है। आजादी के अमृत काल में प्रदेश में अब तक 5936 से अधिक अमृत सरोवर का निर्माण किया जा चुका है। केन-बेतवा लिंक परियोजना के प्रथम चरण में बांध, लिंक नहर तथा पॉवर हाउस का निर्माण कार्य इस वर्ष प्रारंभ होगा। अटल भू-जल योजना में भी लगभग 700 ग्राम पंचायतों में वॉटर सिक्युरिटी प्लान बनाए गए हैं।

अधो-संरचना विकास और बेहतर वित्त प्रबंधन के साथ कृषि प्रधान होने की वजह से प्रदेश में तेज गति से कृषि विकास और किसान-कल्याण के कार्य भी किए जा रहे हैं। लगातार 7 बार प्रतिष्ठित कृषि कर्मण अवार्ड प्राप्त करने वाले मध्यप्रदेश ने गेहूँ उपार्जन में पंजाबा और हरियाणा को पीछे छोड़ दिया है। प्रदेश का सोने जैसे दानों वाला गेहूँ अमेरिका सहित अनेक देशों में निर्यात होता है। अब इसके निर्यात के लिए प्रयास बढ़ाए जा रहे हैं। प्रदेश में एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसिल भी बनाई गई है। कृषि विकास दर जो वर्ष 2002-03 में 03 प्रतिशत थी, वह वर्ष 2020-21 में बाढ़ कर 18.89 प्रतिशत हो गई है। खेती और एलाइड सेक्टर का बजट भी 600 करोड़ से बढ़ कर 53 हजार 964 करोड़ हो गया। खाद्य उत्पादन भी इस अवधि में 159 लाख मीट्रिक टन से बढ़ कर 619 लाख मीट्रिक टन हो गया है।

उद्यानिकी फसलों का रकफ्राा 4 लाख 67 हजार हेक्टेयर से बढ़ कर 25 लाख हेक्टेयर हो गया है। फसल उत्पादन 224 लाख मीट्रिक टन से बढ़ कर 725 लाख मीट्रिक टन से अधिक हो गया है। फसल उत्पादकता 1195 किलोग्राम से बढ़ कर 2421 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गई है। किसान-कल्याण के ध्येय से प्रदेश में गत 3 वर्षों में फसलों की नुकसानी पर 4000 करोड़ से अधिक की राहत राशि वितरित की गई है। प्रदेश के 11 लाख से अधिक डिफाल्टर किसानों का 2123 करोड़ का ब्याज माफ करने के लिए मुख्यमंत्री कृषक ब्याज माफी योजना प्रारंभ की गई है। पिछले 3 वर्षों में किसानों को विभिन्न शासकीय योजनाओं में 2 लाख 69 हजार 686 करोड़ रुपये से अधिक के हितलाभ वितरण किए गए हैं। फसल क्षति प्रतिपूर्ति दरों में भी कई गुना वृद्धि की गई है।

अधो-संरचना, खेती-किसानी तथा किसान-कल्याण के क्षेत्र में प्रदेश की प्रगति और विकास की यह कहानी तो एक बानगी है। प्रदेश में पिछला डेढ़ दशक हर क्षेत्र में प्रगति, विकास और लोगों की तरक्की-खुशहाली का गवाह है।

(जनसंपर्क फीचर)

सरकार के तीन साल कृषि क्षेत्र में बेमिसाल

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत का गौरव-गान वैश्विक स्तर पर हो रहा है। देश के सशक्तिकरण में मध्यप्रदेश भी पूरी ताकत से सशक्त भारत के सपने को साकार करने के लगा है। विगत तीन वर्षों से मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान के नेतृत्व में प्रदेश के किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण के लिये सतत प्रयास हुए। चना, मसूर एवं सरसों का समर्थन मूल्य पर उपार्जन गेहूँ के साथ करने के निर्णय से ही किसानों को हजारों करोड़ रूपये का अतिरिक्त लाभ हुआ है। प्रदेश ने कृषि के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य कर पुरस्कार प्राप्त करने का भी रिकार्ड भी कायम किया है। कृषकों के परिश्रम से सिंचित हमारा प्रदेश नित नये कीर्तिमान स्थापित कर रहा है। सरकार किसानों को फसल का अधिकतम समर्थन मूल्य (एमआरपी) दिलाने के लक्ष्य पर कार्य कर रही है।

वर्तमान सरकार ने अप्रैल 2020 से किसानों को लाभान्वित करने के लिये गेहूँ से पहले चना, मसूर एवं सरसों का समर्थन मूल्य पर उपार्जन करने का अभूतपूर्व निर्णय लिया, पूर्व में इनका उपार्जन गेहूँ के बाद होता था। सरकार के निर्णय से किसानों को उनकी उपज का सीधे-सीधे एक से 2 हजार रूपये प्रति क्विंटल का अतिरिक्त लाभ हुआ। अब किसान चना, मसूर एवं सरसों की फसल को औने-पौने दामों पर बेचने के लिए मजबर नहीं हैं। व्यापारियों को अपने

उद्योगों के लिए चना, मसूर, सरसों की उपज को समर्थन मूल्य से अधिक पर खरीदना पड़ा, इसका लाभ सीधा किसानों को मिला। प्रदेश के किसानों को चना, मसूर, सरसों और ग्रीष्मकालीन मूंग के विक्रय से पिछले तीन वर्षों से प्रति वर्ष 10 हजार करोड़ रूपये से अधिक की अतिरिक्त आय हो रही है। इस वर्ष ग्रीष्मकालीन मूंग समर्थन मूल्य पर 7755 रूपये प्रति क्विंटल खरीदा जायेगा। इससे किसानों को और अधिक अतिरिक्त आय होगी। पहले किसान कम कीमत में मूंग बेचने को मजबूर था, अब नहीं। किसान भारतीय अर्थ-व्यवस्था की मजबूत कड़ी है। हम किसानों को और अधिक ताकत प्रदान कर सशक्त बनाने की दिशा में हर संभव कार्य कर रहे हैं।

राज्य सरकार ने किसानों के हित में दिल्ली तक प्रयास कर समर्थन मूल्य पर प्रतिदिन, प्रति किसान 25 क्विंटल गेहूँ उपार्जन की सीमा को खत्म कराया। साथ ही चना, मसूर और सरसों की प्रतिदिन उपार्जन की सीमा को 25 क्विंटल से बढ़ा कर 40 क्विंटल कराया। चने का उपार्जन 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर और सरसों का 13 क्विंटल प्रति हेक्टेयर से बढ़ा कर समान रूप से 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर किया गया।

राज्य सरकार ने किसानों के हित में दिल्ली तक प्रयास कर समर्थन मूल्य पर प्रतिदिन, प्रति किसान 25 क्विंटल गेहूँ उपार्जन की सीमा को खत्म कराया। साथ ही चना, मसूर और सरसों की प्रतिदिन उपार्जन की सीमा को 25 क्विंटल से बढ़ा कर 40 क्विंटल कराया। चने का उपार्जन 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर और सरसों का 13 क्विंटल प्रति हेक्टेयर से बढ़ा कर समान रूप से 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर किया गया। केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री नरेन्द्र सिंह तोमर ने प्रदेश के किसानों के हित में निर्णय लेते हुए आवश्यक मंजूरियाँ प्रदान की। इससे किसानों को आर्थिक लाभ के साथ ही एक से अधिक बार उपज विक्रय के लिये ले जाने की परेशानी से मुक्तिमिली है।

प्रदेश के किसानों को खुशहाल और समृद्ध बनाने के लिये विगत 3 साल में समग्र प्रयास किये गये। राज्य सरकार, प्रदेश की समृद्धि के लिये किसानों को समृद्ध करने के निरन्तर प्रयास कर रही है, क्योंकि जब किसान समृद्ध होगा, तभी गाँव समृद्ध होगा और गाँव समृद्ध होगा, तो प्रदेश समृद्ध होगा। प्रदेश की समृद्धि में ही देश की समृद्धि निहित है। किसान पुत्रों को किसानी के साथ उद्योगपति बनाने के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके लिए उन्हें सभी आवश्यक

संसाधन उपलब्ध कराने के प्रयास किये जा रहे हैं। किसानों को उपज की ग्रेडिंग, सार्टिंग और मार्केटिंग की सुविधा भी उपलब्ध कराने को सरकार प्रतिबद्ध है। किसान अपनी कृषि उपज से संबंधी उद्योग लगायें एवं अन्य उत्पाद तैयार कर और अधिक दाम प्राप्त करें।

मध्यप्रदेश, वर्ष 2023 मण्डी बोर्ड का गोल्डन जुबली वर्ष मना रहा है। वर्तमान वित्तीय वर्ष में मण्डी बोर्ड ने उत्कृष्ट कार्य करते हुए सर्वाधिक 1681 करोड़ रूपये की आय अर्जित की है। प्रदेश की 14 मण्डियों को हाईटेक बनाया जा रहा है। प्रदेश की सभी 259 मंडियों में आवश्यकतानुसार अधो-संरचनात्मक विकास कार्य किये जा रहे है। देश में मध्यप्रदेश इकलौता ऐसा राज्य है, जिसने एक एण्ड्रायड बेस्ड एप्लीकेशन एमपी फर्म गेट एप से किसानों को अपने दाम पर, अपने घर, खलिहान एवं गोदाम से अपनी कृषि उपज को कहीं भी बेचने में सक्षम बनाया है। फर्म गेट एप का उपयोग कर 12 हजार 22 किसानों ने 50 लाख क्विंटल विभिन्न कृषि उपज बेची है। फार्म गेट एप की कार्य-प्रणाली को केन्द्र सरकार से भी बहुत सराहना मिली है।

किसानों को लाभान्वित करने के लिये सरकार ने इन 3 सालों में समग्र प्रयास किये हैं। सरकार ने मंडियों की कार्य-प्रणाली को और अधिक सुविधाजनक बनाने के लिये ई-अनुज्ञा प्रणाली को लागू किया है। अब कृषि उपज के परिवहन के लिये गेट पास स्वयं व्यापारी बना सकता है। प्रदेश में 58 हजार से अधिक व्यापारियों द्वारा 61 लाख 90 हजार 208 अनुज्ञा-पत्र जारी किये गये हैं। वर्तमान सरकार में कृषि मंत्री बनने के बाद कृषि विभाग में समस्त कार्यालयीन, पत्राचार एवं सूचना संबंधी कार्यों को हिन्दी भाषा में किये जाने के आदेश जारी हुए। किसान भाइयों की विभाग से संबंधित समस्याओं के निराकरण के लिये किसानों का सच्चा साथी कमल सुविधा केन्द्र की स्थापना (दूरभाष क्रमांक : 0755-2558823) की गई। विशेष प्रयास कर मध्यप्रदेश में एपीडा का क्षेत्रीय कार्यालय खुलवाया, जिससे बालाघाट के चिन्नौर

मध्यप्रदेश, वर्ष 2023 मण्डी बोर्ड का गोल्डन जुबली वर्ष मना रहा है। वर्तमान वित्तीय वर्ष में मण्डी बोर्ड ने उत्कृष्ट कार्य करते हुए सर्वाधिक 1681 करोड़ रूपये की आय अर्जित की है। प्रदेश की 14 मण्डियों को हाईटेक बनाया जा रहा है। प्रदेश की सभी 259 मंडियों में आवश्यकतानुसार अधो-संरचनात्मक विकास कार्य किये जा रहे है।

राइस (चावल) और सीहोर के शरबती गेहूँ को जीआई टैग दिलाने में मदद मिली।

प्रदेश में कृषि आधुनिकीकरण के नये आयाम स्थापित हुए है। प्राकृतिक खेती, जैविक खेती, फसल विविधिकरण के लिये किसानों को निरंतर प्रोत्साहित किया जा रहा है। हजारों की संख्या में कृषि उत्पादक समूह (एफपीओ) गठित किये जा रहे है। प्राकृतिक खेती के विस्तार एवं संवर्धन के लिए कृत-संकल्पित सरकार ने "मध्यप्रदेश प्राकृतिक कृषि विकास बोर्ड" का गठन किया। राज्य के प्राकृतिक खेती के लिए 72 हजार 967 किसानों का पोर्टल पर पंजीयन किया गया है।

पिछले तीन वर्षों में प्रदेश के किसानों को प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का अधिक से अधिक लाभ दिलाने के लिए सरकार ने क्रांतिकारी निर्णय लिये। अधिसूचित फसल क्षेत्र के 100 हेक्टेयर के मापदण्ड बदल कर 50 हेक्टेयर किया गया। वन ग्रामों, जिनके किसानों को बीमा योजना का लाभ नहीं मिलता था, उन्हें लाभान्वित करने के लिये पटवारी हल्कों में शामिल करवाया। पूर्ववर्ती सरकार के कार्यकाल में प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में स्केल ऑफ फायनेंस 75 प्रतिशत को बढ़ा कर 100 प्रतिशत किया। किसानों के हित में फसल बीमा की अंतिम तिथि में दो बार वृद्धि करवाई। इतना ही नहीं शासकीय अवकाश दिवसों में भी पहली बार बैंक खुलवा कर बीमा करवाया। भारत सरकार के बीमा पोर्टल को विशेष अनुमति लेकर खुलवाया और छूटे हुए किसानों की प्रविष्टि करवा कर 450 करोड़ रूपये का अतिरिक्त फसल बीमा क्लेम किसानों को दिलाया। सरकार ने बकाया प्रीमियम जमा किया एवं वर्ष 2018-19 से वर्ष 2020-21 खरीफ तक की कुल 17 हजार 140 करोड़ रूपये की फसल बीमा दावा राशि किसानों को दिलवायी।

प्रदेश में कृषि आधुनिकीकरण के नये आयाम स्थापित हुए है। प्राकृतिक खेती, जैविक खेती, फसल विविधिकरण के लिये किसानों को निरंतर प्रोत्साहित किया जा रहा है। हजारों की संख्या में कृषि उत्पादक समूह (एफपीओ) गठित किये जा रहे है।

किसानों के हित में विगत तीन वर्षों में प्राकृतिक खेती प्रोत्साहन योजना, एक जिला-एक उत्पाद योजना, जीआई टैग के लिये राज्य योजना, फसल विविधीकरण प्रोत्साहन योजना, कृषि अधो-संरचना निधि संचालन योजना, निर्यात प्रोत्साहन योजना, राज्य मिलेट मिशन, एफपीओ गठन एवं

संवर्धन योजना, मुख्यमंत्री नरवाई प्रबंधन योजना और कौशल विकास प्रशिक्षण जैसी नवीन योजनाओं को शुरू किया। कृषि विभाग में विभिन्न संवर्ग के रिक्तपदों की पूर्ति के लिये अभियान चला कर लगभग 4 हजार पदों पर भर्ती की जा रही है। प्रदेश की कृषि उपज मण्डियों में कार्यरत रहते हुए काल के गाल में समा जाने वाले 181 अधिकारी-कर्मचारियों के आश्रितों को विभिन्न पदों पर अनुकम्पा नियुक्ति प्रदान करने का महती कार्य किया गया।

राज्य सरकार ने कृषि एवं सहायक गतिविधियों के लिए पृथक से कृषि बजट का प्रावधान किया। वित्तीय वर्ष 2023-24 के कृषि बजट में 53 हजार 964 करोड़ रुपये का बजट प्रावधान किया है। इसमें किसान-कल्याण एवं कृषि विकास विभाग के लिये 16 हजार 996 करोड़ रुपये का प्रावधान है। कृषक उन्मुखी योजना आत्मा का बजट दोगुना कर 2 हजार करोड़ 94 लाख रुपये किया गया है।

राज्य सरकार ने कृषि एवं सहायक गतिविधियों के लिए पृथक से कृषि बजट का प्रावधान किया। वित्तीय वर्ष 2023-24 के कृषि बजट में 53 हजार 964 करोड़ रूपये का बजट प्रावधान किया है। इसमें किसान-कल्याण एवं कृषि विकास विभाग के लिये 16 हजार 996 करोड़ रूपये का प्रावधान है। कृषक उन्मुखी योजना "आत्मा" का बजट दोगुना कर 2 हजार करोड़ 94 लाख रूपये किया गया है। सरकार ने मुख्यमंत्री किसान-कल्याण योजना में उल्लेखनीय 3 हजार 200 करोड़ रूपये का प्रावधान किया है।

प्रदेश को विगत 3 सालों में किये गये किसान हितैषी कार्य एवं प्रदेश में कृषि क्षेत्र में किये गये उल्लेखनीय कार्यों के लिये कई पुरस्कार मिले। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना पोर्टल पर लैण्ड रिकार्ड का इंटीग्रेशन करने पर भारत सरकार द्वारा वर्ष 2022 में एक्सीलेंस अवार्ड से प्रदेश को सम्मानित किया गया है। कृषि अधो-संरचना निधि (एआईएफ) के सर्वाधिक उपयोग हेतु "बेस्ट परफार्मिंग स्टेट" (उत्कृष्ट प्रदर्शनकर्ता राज्य) का राष्ट्रीय पुरस्कार और मिलेट मिशन योजना में "बेस्ट इमर्जिंग स्टेट" (उभरता हुआ सर्वोत्तम राज्य) का पुरस्कार भी मिला है। गेहूँ निर्यात के क्षेत्र में मध्यप्रदेश अव्वल स्थान पर है। दलहनी फसलों के उत्पादन में प्रदेश, देश में प्रथम, खाद्यान्न उत्पादन में द्वितीय एवं तिलहनी फसलों में तृतीय स्थान पर है। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में गुड-गवर्नेस इण्डेक्स में हमारे राज्य का पूरे देश में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन रहा है।

(लेखक प्रदेश के किसान-कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री है)

मणिपुर हिंसा का जिम्मेदार कौन?

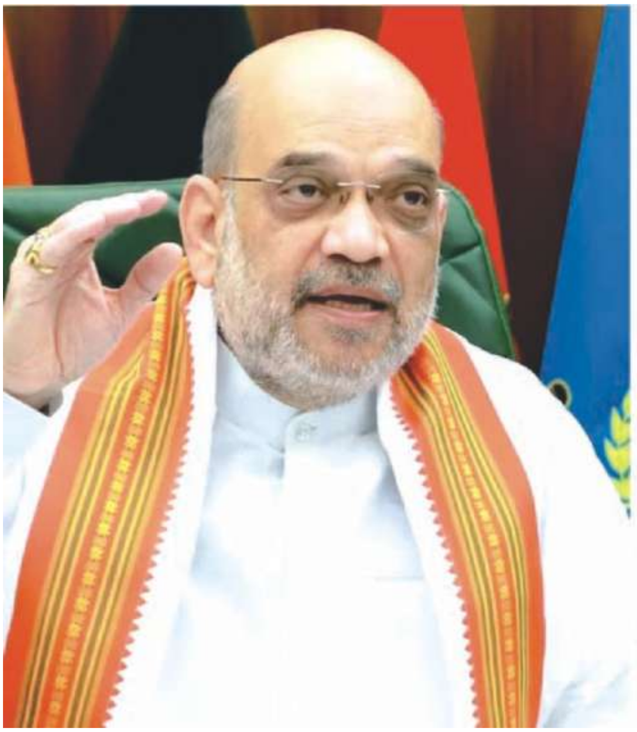

रघु ठाकुर

मणिपुर में मैतेई समाज को आदिवासी समाज में शामिल करने के विरोध में स्थानीय आदिवासियों में जिनमें नगा और कुकी मुख्यतः शामिल हैं ने तीखी और हिंसक प्रतिक्रिया की है, जो कि वहां की सरकार के लिये भी अप्रत्याशित थी। हालांकि मैतई समाज को आदिवासी समाज में शामिल करने का आदेश सरकार ने ही दिया था और मुख्यमंत्री जे. वीरेन्द्र सिंह की इसमें अहम भूमिका थी। चूंकि मैतई समाज की आबादी राज्य की आबादी का लगभग 53 प्रतिशत है इसलिये मुख्यमंत्री ने इसे अपने चुनाव जीतने का एक महत्वपूर्ण हथियार माना होगा। दो महीने से ज्यादा हो गए हैं और इस सीमावती राज्य पर सिवाय आपस में भिड़े हथियारबंद गिरोहों और भीड़ के किसी का हुक्म नहीं चल पा रहा है। केंद्र में सत्तासीन भाजपा इस राज्य की सत्ता भी संभाल रही है। यह ठीक उसी तरह हाईकमान के इशारे पर चलने वाली पार्टी है, जैसे इंदिरा गांधी के उत्कर्ष के दौर में कांग्रेस चलती थी। लेकिन क्या इस सर्वशक्तिशाली हाईकमान का हुक्म मणिपुर में चल रहा है? सबूत तो बताते हैं कि ऐसा नहीं हो पा रहा है। मैतेई समुदाय चूंकि हिंदू बहुल है इसलिए उसकी वफादारी और उसका समर्थन हासिल करने और ईसाई जनजातीय समुदायों को असंतुष्ट छोड़ देने से क्या वहां अमन-चैन बना रह सकता है? जनजातीय समुदायों को यह साजिश लगती है। यह राज्य में हिंदू-ईसाई ध्रुवीकरण करने की चाल सिवाय कुछ नहीं है। दूसरा सवाल यह है कि वे अपने ही एक राज्य में शासन की विफलता की फांस कब तक लगाए रहेंगे? खासकर तब जबकि वे उत्तर-पूर्वी राज्यों में अपने उभार को अपनी महान सफलता बताने का दावा करते रहे हैं? उत्तर-पूर्व में भाजपा की राजनीतिक सफलता भारतीय राजनीति में एक उल्लेखनीय मोड़ थी, लेकिन इस सफलता पर मणिपुर में गहरा ग्रहण लग रहा है। भाजपा ने उत्तर-पूर्व के

पुराने संकट के लिए कांग्रेस के स्वार्थ और भ्रष्टाचार को जिम्मेदार तो बताया है मगर उसने दो प्रांतों की अनदेखी की है। अगर कांग्रेस इतनी ही भ्रष्ट थी तो इस क्षेत्र में भाजपा का नया नेतृत्व कांग्रेस से उधार क्यों लिया गया है? दूसरी बात, उसने तीसरे कारण, इस क्षेत्र की जटिलता को बड़े आराम से भुला दिया। उत्तर-पूर्व में आपका जिस चीज से सामना होता है उसके कारण हिंदी पट्टी वाला जाना- पहचाना हिंदू-मुस्लिम या जातीय समीकरण का फार्मूला इस जनजातीय क्षेत्र में कारगर नहीं होता। इसकी मिसाल मणिपुर से ज्यादा और कोई राज्य नहीं है। इसलिए मणिपुर देश का वह राज्य है जिस पर शासन करना सबसे कठिन है। हालांकि हाल ही में जब इस संबंध में सुप्रीम कोर्ट में याचिका आई थी तो सुप्रीम कोर्ट ने भी हाईकोर्ट के खिलाफ टिप्पणी की और कहा कि हाईकोर्ट का राज्य सरकार को दिया गया आदेश गलत है। इस घटना में जहां एक तरफ 100 से अधिक लोग मारे गये। लगभग 15,000 लोग निर्वासित हुये जिन्हें सेना ने दंगाग्रस्त इलाकों से निकाला और 500 से अधिक लोग गंभीर रूप से घायल हुये। सार्वजनिक सम्पत्ति की और जन-धन की कितनी हानि हुई है इसका कल्पना करना कठिन है। क्योंकि दंगे अभी तक रूके नहीं हैं। आखिर ऐसी घटनाओं के लिये कौन जिम्मेवार है? इस पर गंभीरता से विचार होना चाहिये। मेरी राय में इस घटना के लिये तीनों पक्ष जवाबदार हैं:- न्यायपालिका याने हाईकोर्ट, राज्य सरकार, मैतई समाज के अगुआ लोग।

उत्तर-पूर्व में आपका जिस चीज से सामना होता है उसके कारण हिंदी पट्टी वाला जाना-पहचाना हिंदू-मुस्लिम या जातीय समीकरण का फार्मूला इस जनजातीय क्षेत्र में कारगर नहीं होता। इसकी मिसाल मणिपुर से ज्यादा और कोई राज्य नहीं है। इसलिए मणिपुर देश का वह राज्य है जिस पर शासन करना सबसे कठिन है।

जैसा कि मैंने उपर कहा कि हाईकोर्ट का आदेश य निर्देश कितना अविचारित था, इसका तो संकेत अपनी सार्वजनिक टिप्पणी के माध्यम से स्वत: सर्वोच्च न्यायलय ने दे दिया है। आजकल शीर्ष अदालतों को रोज याचिका के नाम से अपनी मनमर्जी की टिप्पणियां करना, शुद्ध क्रांतिकारिता बखान करना एक चलन सा बन गया और इस बुराई को स्वतः शीर्ष अदालतें और उनके संजीदा जज भी महसूस करने लगे हैं। अप्रैल 2023 को सुप्रीम कोर्ट के सेवानिवृत्त जज जे. चेलमेश्वर ने केरल के कोच्चि में क्या कोलिजियम संविधान से

अलग है विषय पर बोलते हुये कहा कि कोलिजियम के सामने तमाम मामले आते हैं। याने शीर्ष न्यायपालिका की नियुक्तिऔर उसके प्रत्याशी जजों के बारे में सारे तथ्य कोलेजियम के सामने प्रस्तुत होते हैं। स्वतः चेलमेश्वर जी कहते हैं कि जो तथ्य प्रस्तुत होते हैं, उनके आधार पर कोलेजियम कोई कार्यवाही नहीं करता। मान लिया कोलेजियम जजों के चयन के लिये गठित एक मान्य संस्था है। परन्तु अगर चयन की प्रत्याशी वाले न्यायाधीशों के विरूद्ध कुछ ऐसे तथ्य सामने आते हैं जिनमें वह दोषी हैं तो उन्हें केवल अपात्र मानकर खारिज कर देना उचित नहीं है। जस्टिस चेमलेश्वर कहते हैं कि उन सूचनाओं के आधार पर ऐसे जजों के विरूद्ध कोलेजियम को कार्यवाही भी करना चाहिए। नि:संदेह चेमलेश्वर की पीड़ा एक सच्चे इंसान की पीड़ा है। उन्होंने यह भी कहा कि जिस जज पर आरोप होते हैं उन पर कोई कार्यवाही नहीं होती और बहुत हुआ तो उसका तबादला कर बात खत्म हो जाती है। उन्होंने यह भी कहा कि मैं राष्ट्रीय न्यायिक आयोग बनाने का समर्थक नहीं हूँ परन्तु कोलेजियम व्यवस्था को कैसे मजबूत बनाया जाए ताकि उसका लाभ आम आदमी को मिले यह उनकी चिंता है। उन्होंने कहा कि कई जज तो इतने आलसी होते हैं कि उन्हें फैसले लिखने में सालों लग जाते हैं। और कुछ ऐसे हैं कि उन्हें काम नहीं आता है। अपने सधे व संतुलित शब्दों में जे. चेमलेश्वर ने संपूर्ण न्यायपालिका उसकी चयन प्रक्रिया, कार्यवाही करने के तरीके को कटघरे में खड़ा किया है। यह सही भी है। केवल एक जस्टिस कर्णन जो बंगाल हाईकोर्ट के जज थे को छोड़कर किसी और जज के विरूद्ध कोई कार्यवाही हुई हो कम से कम मुझे तो याद नहीं है। और वह भी शायद इसलिये विवश होकर करना पड़ी कि कर्णन ने अपनी संवैधानिक और नैतिक सभी मर्यादाओं को ताक पर रख दिया था। और वह तो सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के खिलाफही न केवल आदेश बल्कि सम्मन व वारेन्ट जारी करने लगे थे। यानी एक प्रकार से वे न्यायिक अराजकता या संवैधानिक अराजकता कर रहे थे। अगर मणिपुर के हाईकोर्ट ने मैतई समाज को आदिवासी समाज में शामिल करने की याचिका को बजाय सरकार को निर्देश करने के प्रारंभिक स्तर पर ही खारिज किया होता तो सरकार शायद यह कदम नहीं उठाती। हालांकि

न्यायपालिका के असंवैधानिक निर्देश से मणिपुर की सरकार और मुख्यमंत्री भी दोषमुक्त नहीं हो सकते क्योंकि जन भावनाओं को समझना कानून व्यवस्था को संभालना समाज के व्यापक हित में न्याय संगत फैसला लेना, यह सरकार का मूल दायित्व होता है। इसके पहले भी देश में कई स्थानों पर ऐसी आरक्षण की मांगे हुई हैं जो तार्किक व वैधानिक नहीं थी और वहां की सरकारों ने विरोध सहकर भी ऐसे जन आंदोलनों का मुकाबला किया है। राजस्थान में गुर्जर समाज ने भी आदिवासियों में शामिल करने की मांग को लेकर भारी आंदोलन किया था जिसमें काफी लोग मारे गये थे। परन्तु न्यायपालिका या राज्य सरकार ने विरोध सहकर भी उसे लागू नहीं किया। पता नहीं क्यों मुख्यमंत्री जे. वीरेन्द्र सिंह को देश की इस अहम घटना की जानकारी कैसे नहीं थी या फिर 53 प्रतिशत की बहुमत आबादी के समर्थन के लालच में वे होश व हवास खो बैठे। उनके एक निर्णय से कितने जनधन की हानि हुई वह एक जगह है और दूसरे प्रदेश में जो जातीय वैमनस्यता बनी है वह भी मुख्यमंत्री का क्षम्य अपराध नहीं है। आजकल जातीय समूहों में यह होड़ लगी है कि वह कैसे फौरी लाभ उठायें और समस्याओं के बड़े हल के लिये वे कोई बड़ा कदम नहीं उठाना चाहते। व्यवस्था को बदलकर कोई नई व्यवस्था नहीं लाना चाहते बल्कि छोटे लक्ष्यों को लेकर लड़ने मरने को तैयार रहते हैं। आजादी के बाद राजस्थान में मीणा समाज को आदिवासियों में शामिल किया गया था। राजस्थान के मूल आदिवासी गौड़ भील आदि उस समय बिलकुल ही अशिक्षित थे व जंगलों में थे। इसलिये कुछ दशकों तक अनुसूचित जनजातियों के आरक्षण का सर्वाधिक लाभ या कहें सम्पूर्ण लाभ मीणा समाज ने उठाया। एक-एक घर में कई-कई आई.ए.एस., आई.पी.एस. व बड़े पदों वाले हो गये। उनका सामना उन कमजोर

आदिवासियों से था जो वास्तव में आदिवासी हैं परन्तु शिक्षा में बहुत पीछे हैं। उनमें इतनी जाग्रति और संगठन भी नहीं था कि वे इसका विरोध कर पाते। बेरोजगारी समूचे देश में है और सभी जातियों व समूहों में हैं। इसी प्रकार गरीबी भी सभी जातियों व समूहों में है परन्तु बेरोजगारी को समाप्त करना सबके लिये काम की मांग करना यह आसान नहीं है। इसके लिये तो सारे निजाम को बदलना होगा। और इसलिये यह आसान मांग है कि किसी एक आरक्षित समूह में जहां मुकाबला कमजोर से हो वहां प्रवेश कर छोटी मोटी हिस्सेदारियां लेना कुछ अपने जाति समूह के लोगों को बड़े पदों पर बैठा लेना यह आसान प्रक्रिया होती है। यही मार्ग राजस्थान में गुर्जर समाज ने अपनाया और उसके लिये भारी कुर्बानी दी जिसमें 70 से अधिक लोग मारे गये थे कई महीनों तक रेलगाड़ियां बंद रही थी इसके बावजूद वह अनुसूचित जनजाति में शामिल नहीं हो पाये थे। ऐसी ही मांग देश के अलग-अलग भागों में उठती रहती हैं। परन्तु गुर्जर समाज के परिणाम देखने के बाद अब कोई बड़ा संघर्ष जातीय समूहों ने नहीं किया है। मैतेई समाज भी कोई संघर्ष नहीं कर रही थी और मणिपुर में जो हुआ वह मांग का संघर्ष नहीं है बल्कि मांग के प्रतिकार का संघर्ष है। जिससे न मैतेई समाज को न राज्य को कुछ हासिल हुआ बल्कि एक स्थाई घाव बन गया। अब यह कितने वर्षों में भरा जायेगा, या इसके भावी परिणाम क्या होंगे इसका आंकलन करना कठिन है। वैसे नागा व कूकी समुदाओं का एक हिस्सा प्रथकता समर्थक रहा है और इस घटना से उसे प्राणवायु मिली है। मेरी राय में अब समाज और सरकार को निम्न मुद्दों पर विचार कर निर्णय करना चाहिये-

■ जातिगत व धार्मिक आदिवासी समूहों की जातिगत और समूहगत जनगणना हो।

■ उच्च तकनीकी, वैज्ञानिक और विशेषज्ञ ज्ञान के विषयों और रोजगारों को छोड़कर बकाया सरकारी और निजी नौकरियों में जातियों व समूहों की संख्या के अनुपात में भागीदारी हो।

■ जिनके पास सरकारी नौकरी या अन्य कोई काम धंधा नहीं है उन बेरोजगारों को रू 5000/- प्रतिमाह की दर से न्यूनतम बेरोजगारी भत्ता दिया जाए।

■ सभी चयन परीक्षाओं या आयोजनों को विकेन्द्रित कर तहसील स्तरों पर किया जाये तथा चयनित परीक्षा आदि के लिये परीक्षा शुल्क की सम्पूर्ण पद्धति समाप्त हो। डॉ. लोहिया ने 50 के दशक में कहा था कि कम से कम 60 प्रतिशत पिछड़ों की हिस्सेदारी हो और अब यह कहना होगा कि जिसकी जितनी संख्या भारी उतनी उसकी भागीदारी।

■ इस नीतिगत फैसले से राष्ट्रीय एकता भी मजबूत होगी और राजनीति भी छोटे सवालों से हटकर बड़े लक्ष्यों पर केन्द्रित हो सकेगी। आरक्षण के पक्ष-विपक्ष के ध्रुवीकरण से भी देश बच सकेगा।

Public Relations in Banking Sector

Public Relation (PR) is the most important and essential part of the communication. British Institute of Public Relation defined PR as a planned and sustained effort to establish and maintain goodwill and mutual understanding between an organization and its public. According to American Institute of PR, Public Relation is a strategic communication process that builds mutually beneficial relationships between organization and their public. On the other way, it is an important method for image building, to maintain goodwill and publicity of an organization to win over an extremely competitive market. A favarable image or good reputaion helps to increase the sale of a particular company and in case of negetive publicity, the company's sale as well as its reputation will be at stake. So, to enhance a company's reputation, several methods are practiced by the practiced by the PR department to communicate with the internal and external public. It is a two-way flow of mutual understanding (Sam Black, Practical Public Relations). It is an extended arm and eyes and eard of modern way of management.

The concept of Public Relation dates back to history. In 49 BC reports about the achievements of Julius Caesar was published in a daily, 'Acta

Diurna'. In 1066 the Norman conques of England was depicted in worls's first info-graphic, the Bayeuk Tapestry. In 17th century the term 'propaganda' was first used by the Catholi Church. In an address to US congress Thomas Jefferson first used the term 'public relation' in 1807. But, the first PR department was established in 1889 by Westinghouse. It was established to fight Thomas electric. This is known as the 'battle of currents'. The term PR was first used in the year-book of railway literature (1897) to communicate between the public and their organization. This is marked as the birth of the Public Relation. The first Public Relations agency, namely 'The Publicity Bureau' was established in 1900.

The first official release was created by Ivy Ledbetter Lee in 1906. It was created on electric train wreck. This was printed in 'The New York Times'. Lee was na American publicity expertand considered as the founder of modern Public Relation and became popular for his work with the Rockefeller family. In 1924 Basil Clark introduces PR in Britain. When wall Street craches in 1929, Public Relatons became a necessity. Edward Louis Barnes was an Austrian-American expert in the field of Public Relatons. He was best known for to encourage female smoking by branding cigarettes with the 'Torches of Freedom'. He was the pioneer in the field of propaganda and worked for leading American corporate companies like 'Procter and Gamble; 'General Electric; In his obituary (10th March, 1995), 'The New York Times referred him as 'The father of Public Relations and leader in opinion making'. Evolution of PR in India was found in our epics Ramayana and Mahabharata. The administration was very much concerned about their public feelings and opinions. India had master of religious communicators like Gautama Buddha, Shankaracharya. King Ashoka sent his daughter Sanghamitra to Sri Lanka to preach Buddhism. She is known as the first female PR executive in History. Ashokan inscriptions were an indeal example of Public Relations. Systematic practice of PR began with the House of Tata's and by India Railways. After independence, the Government set up different media units to handle Public Relations.

Role of PR in banking sector

PR is considered as a very crucial and vital part of banking sector for image building, to maintain goodwill and to gain trust of its customers. In case of banking, for their daily transaction customers need interaction with their respective banks. Besides, banks have to inform about their different schemes and facilities to the customers. So, the public relation or customer care department has to play a vital role in entertaining and fulfilling the need of the same. To gain the trust or confidence of its customers, banks need PR support. PR department often do

research rgarding customer satisfaction about different bankking schemes and products.

Different methods or tools are used by banks. The traditional methods are by sending News or Press release to different media, Newsletters to the customers and by appearances at public events,

such as, trade show, conventions etc. With the advancement of the modern technology, banking service has now been exposed to our fingertips. PR department can now use internet as a medium of communication. Social media, e-mail, and text messgages are sed to accomplish their goals.

Banking industry is a service orientetd one Community banks know the imprtance of public consent. So, sevral services are offered to satisfy the need of a customer.Besides, debit and credit cards and net banking is becoming more and more popular now. Phone banking has also made the transactions very. People can access their accounts also through banking apps. Nowadays, it is very easy to get a loan for buying a car or house or to vail a loan for education or to start a new venture. PR in banks works for 24x7 to maintain a good relation with its customers. People can have financial transactions or enquire about a particular service through attractive and useful websites.

Brand ambassadors also play na important role to build a positive image about a particular bank; for example, Deepika Padukone is the brand ambassador for Axis Bank from 2014 and Amitabh Bachchan was the brand ambassador for ICICI bank in 2013-14 ICICI bank has also used the bollywood superstar Shahrukh khan to boost their overseas business. Bank of Baroda once used leading Indian cricketer Rahul Dravid in 2005. Dravid symbolizes solidity and trust. IndusInd bank prefereed actors like Farhan Akhtar, Sharman Joshi and Boman Irani rather than stars. Joshi featured in a service called 'My Account, My Number' to get account numbers as per the choice of the customers. In 2016, Boman Irani and Farhan Akhtar advertise for a new service called 'fingerprint Banking' to allow customers to make transactions on its mobile banking app. Captain of India cricket team, Virat Kohli is associated with the Punjab National Bank since he was 16. Canara bank had chosen the India opener Shikhar Dhawan as their brand ambassador in 2014. Among foreign bank, Royal Bank of Scotland roped in master blaster Sachin Tendulkar in 2008 as their brand ambassador. In 2003 Standard Chartered Bank selected ex-India captain kapil Dev as a face for their campaign. In 2006 renowned Cricket Sunil

Gavasker joined tennis star Sania Mirza as the brand ambassador of Deutsche Bank.

PR department not only enhances communication and publicity, but also have a pivotal role in crisis management. Routine jobs of PRO do not need a very innovative mind; in fact it is not a very interesting genre. But, in the crisis situations, it is totally different. It is then and only then that the PRO becomes the judge, crisis situation are an acid test for the PRO. The Public Relation is to deal with anything and everything that they have to face in the crisis situations. Thers is no fixed crisis and therefore there is no particular formula to combat a crisis in a crisis situation. However, there are some basic ways to get going. One must be prepared for the worst and hope for the best. In the crisis situation Public Relations department of an organization has to deal with the major unpredictable event. It is said that when in crises, we must tell the truth and act promptly. The three C's of credibility are to be-compassionate, competent and confident.

For better communication with the public bank have changed a lot. ICICI bank which is the second largest bank of India, Introduced 'Branding' in the Idian banking industry. They first introduced net banking and e-mail marketing. They are the pioneers in retail banking and emphasizes on the data entre availability and data protection solution. For better customer relation 'MILAP' function is conducted on the third Friday of every month to get feedback from the customers. The outdoor activity also increased from time to time. Besides that they also took several measures to keep in constant touch with their internal public. They also involved themselves in film promotion, as in 'Baghban' (2003)

To launch international credit card, ICICI bank associated them with Amway India. So, customers can purchase Amway products from Amway distributors to redeem their points. Again, ICICI customers can book railway tickets by using mobile banking system. ICICI Bank also tie-up with the Cartoon Network for theif publicity purpose. IDBI and Exim Bank also financed 50% of their budget for film funding. They invested in the films like Aakhen (2002), Qayamt (2003) Main Prerm Ki Deewani Hoon (2003), Veer Zara (2004), Mangal Pandey (2005) Don (2006) etc, at present, IDBI and Exaim bank have temporily decided not to finance in film industry, but Yes Bank have continued to invest in the same for their profit & publicity. On the other hand State Bank of India one of the leading nationalized banks of India prefers to maintain customer relation by using different media channels to promote their different services and to gain credibility among its public. In the age of social media and internet technology, Public Relation of banks has now become a very effective and easier way to communicate with their respective customers.

Ph.D Research Fellow,
Department of Journalism and Mass Communication, University of Calcutta.

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान, भोपाल

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान वर्ष 1998 से सतत् रूप से संचालित हो रहा है। इस संस्थान से अध्ययन कर छात्र-छात्राएं प्रिंट व इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में अच्छे पदों पर पदस्थ हैं। साथ ही साथ शासकीय पद पर आसीन होकर इस संस्थान को गौरवान्वित कर रहे हैं।

: विषय :

मास्टर ऑफ आर्ट जर्नलिज्म (2 वर्ष)

प्रवेश प्रारंभ

संपर्क सूत्र

विजया पाठक (संचालक) - 9826064596

अर्चना शर्मा - 9754199671

कार्यालय - कार्पोरेट कार्यालय - एफ 116/17, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

संस्थान - 28, सुरभि विहार कालोनी, कालीबाड़ी, बी.डी.ए. रोड, भेल, भोपाल, म.प्र.